श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय का १८६वां पुष्प

☐ पुस्तक

☐ **महाभारत के प्रेरणा प्रदीप**

☐ लेखक

उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी महाराज

☐ सम्पादक

देवेन्द्र मुनि शास्त्री

कविवर्य नेमीचन्द जी पुगलिया

☐ प्रथम प्रवेश

१२ अक्टूबर १९८१

[गुरुदेव श्री की ७२ वी जन्म जयन्ती]

वि० स० २०३८ आश्विन

☐ प्रकाशक

श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय

शास्त्री सर्कल, उदयपुर (राजस्थान)

☐ मुद्रक

श्रीचन्द सुराना के लिए

सजय प्रेस, वेलनगज, आगरा

मूल्य लागत मात्र दस रुपया सिर्फ

समर्पण

अध्यात्मजगत के दिव्य नक्षत्र
महान् जप व ध्यानयोगी
वचनसिद्ध स्वर्गीय पूज्य दादा गुरुदेव
परम श्रद्धेय श्री ज्येष्ठमल जी महाराज
की पुण्य स्मृति मे

अनन्त आस्था के साथ........
सादर........सविनय
सभक्ति........समर्पित

—उपाध्याय पुष्कर मुनि

प्रकाशकीय

अपने प्रबुद्ध पाठको के कर-कमलो मे महाभारत के प्रेरणा-प्रदीप ग्रन्थ समर्पित करते हुए अत्यन्त आल्हाद का अनुभव हो रहा है। महाभारत भारतीय सस्कृति की वहु-प्रचलित लोकप्रिय कथा है। जिस कथा को भारतीय के परम्परा सभी मूर्धन्य लेखको ने अपनी कविता का विषय वनाया है। कितने ही प्रसग तो इतने अधिक मधुर व प्रेरणादायी है कि जिन पर अत्यधिक चिन्तको ने लिखा है।

परम श्रद्धेय सद् गुरुवर्य जन्मजात कवि है। कवि कर्म उनका सहज है। समय-समय पर विविध प्रसगो पर गुरुदेव श्री लिखते रहते है। इसके पूर्व गुरुदेव श्री की अनेक **काव्य कृतियाँ** प्रकाश मे आ चुकी है। **ज्योतिर्धर जैनाचार्य, विमल विभूतियाँ वैराग्यमूर्ति जम्बू कुमार** आदि प्रकाशित हो चुकी है। अव आपके हाथो मे '**महाभारत के प्रेरणा-प्रदीप** ग्रन्थ हैं। यह ग्रन्थ सम्पूर्ण महाभारत को लेकर नही लिखा गया है। महाभारत मे जो प्रसग वहुत ही हृदयस्पर्शी व प्रेरणाप्रद है, उन्ही प्रसगो को गुरुदेव श्री ने अकित किया है।

अन्य काव्य साहित्य की भाँति पूज्य गुरुदेव श्री का यह काव्य ग्रन्थ भी अत्यधिक लोकप्रिय वनेगा ऐसा आत्मविश्वास है।

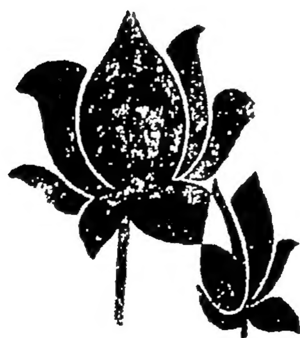
श्रद्धेय गुरुदेव श्री ने जैन कथा-साहित्य लिखकर एक नवीन कीतिमान स्थापित किया है। सस्कृत, प्राकृत, अपभ्र श, गुजराती व प्राचीन राजस्थानी आदि भाषाओ मे से सैंकडो कथाएँ लिखी है। सत्तर भाग प्रकाशित हो चुके हैं और नब्बे भाग तक सम्पादित होकर तैयार है। वे भी शीघ्र ही प्रकाशित होने वाले हैं। गुरुदेव श्री अपने जीवन के यशस्वी इकहत्तर वर्ष पूर्ण कर वहत्तरवें वर्ष मे प्रवेश कर रहे हैं। इस पावन पुण्य वेला पर प्रस्तुत ग्रन्थ रत्न प्रकाशित करते हुए हमे अपार आनन्द हो रहा है। गुरुदेव श्री का अन्य कविता व काव्य साहित्य भी वहुत सारा लिखा पडा हुआ है, उसे भी यथासमय प्रकाशित करने का हमारा दृढ सकल्प है।

आज भौतिकवाद की चकाचौंध मे मानव अपने सही गन्तव्य स्थान को विस्मृत हो रहा है। जिससे उसे अपार अशान्ति है। ऐसी स्थिति मे सत्-साहित्य ही उसे सही मार्ग दर्शन दे सकता है। इसलिए अधिक से अधिक साहित्य का पठन हो प्रचार हो, यह अपेक्षित है। जिस तरह पूज्य गुरुदेव श्री व उनका विद्वान शिष्य वर्ग साहित्य के निर्माण मे लगा हुआ है, उसी तरह हमे भी साहित्य प्रचार की ओर लगना चाहिए।

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशन मे जिन दानी-महानुभावो ने उदारता के साथ सहयोग दिया है, उनका हम हृदय से आभार मानते है, और भविष्य मे सदा सहयोग मिलता रहेगा, यही मगल-कामना करते है।

मन्त्री

श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय



प्रस्तावना

किसी विद्वान का कहना है—"सपूर्ण भारतीय सस्कृति और भारतीय साहित्य का हार्द समझना हो तो—सिर्फ रामायण और महाभारत को पढ़ो।" रामायण एव महाभारत समस्त भारतीय ज्ञान-विज्ञान-सस्कृति-सभ्यता का खजाना है। वल्कि मेरा तो यह भी अनुभव है कि एक महाभारत ही सपूर्ण भारतीय सस्कृति व तत्त्वज्ञान का प्रतिनिधित्व कर सकता है। गीता का ज्ञान भी इसमे छुपा है तो श्रीकृष्ण-पाडव चरित्र के रूप मे पूर्ण भारतीय सस्कृति वहाँ परिव्याप्त है। ज्ञानयोग तथा कर्मयोग का व्यावहारिक भाष्य महाभारत के पात्र स्वय है। महाभारत के वीर-उदात्त पात्रो मे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र की, प्रत्येक नीति व सदाचार के मार्ग की जीवत प्रेरणा है।

रामायण—जहाँ भाइयो के प्रेम की कहानी है, वहाँ महाभारत भाइयो के विग्रह व विद्वेष की कथा सुनाता है। महाभारत कथा का सबसे वडा सदेश यदि कुछ है तो वह—'ईर्ष्या-द्वेष-अहकार से विनाश और विनम्रता, सद्भाव तथा सदाचार से विजय।" कौरव कलह के प्रतीक है तो पाडव प्रेम के। कौरवो का दुर्दान्त अहकार जव श्रीकृष्ण जैसे योगेश्वर की उद्बोधना से भी दूर नही हुआ तो उसका अतिम परिणाम हुआ—कौरवो का विनाश! पाडव वीर, अप्रतिम योद्धा और शक्तिपुज होकर भी योगेश्वर श्रीकृष्ण के उद्बोध से चलते है तो वे रणक्षेत्र के अतिम विजेता वनते है। पाडव और कौरवो के सपूर्ण घटनाचक्र प्राय श्रीकृष्ण के इर्द-गिर्द ही चलते हैं।

यद्यपि महाभारत सपूर्ण भारतीय सस्कृति का जीवनग्रन्थ है, पर उसमे भी जैन महाभारत, वैदिक महाभारत—यो दो धाराएँ वन गई हैं। महाभारत की मूल कथा मे कोई विशेष अन्तर नही है, पर सिद्धान्त और दृष्टिकोण के भेद से अवान्तर कथाएँ, घटनाए और पात्रो के चरित्र मे एक मूल भूत अन्तर भी आ गया है—वह है कृपावाद एव अवतारवाद का। जैन परम्परा जहाँ कर्मवाद, स्वतन्त्र. कर्त्ता के मूल विन्दु पर चलती है, वहाँ वैदिक परम्परा **'ईश्वरेच्छा वलीयसी'** या **'ईश्वर लीला'** की धुरी पर टिकी है। जैन परम्परा मे सभी पात्रो का जन्म सामान्य भारतीय ढग से होता है, वहाँ वैदिक महाभारत मे पाँचो पाडव, द्रोपदी, धृष्टद्युम्न, भीष्मपितामह

गगा आदि की उत्पत्ति, अतिमानवीय ढग से वताई गई है । इसी प्रकार कृपावाद, अवतारवाद की कल्पना के रग मे रग कर अनेक उपकथाएँ इसमे जुड गई है । यह मूल भूत भेद होते हुए भी महाभारत कथा की मूल-प्रेरणा, उदात्त जीवन दृष्टि और सदाचार-प्रेरणा, न्याय-नीति रक्षा, उदारता, वीरता आदि गुणो का दोनो ही महाभारत काव्यो मे सुन्दर वर्णन किया गया है ।

प्रस्तुत काव्य

प्रस्तुत काव्य मे महाभारत की सपूर्ण कथा नही है, किन्तु कवि राजहस की तरह महाभारत के मुक्तातट से कुछ वहुमूल्य चमकीली मुक्ताए ही चुनता है । सपूर्ण महाभारत कथा सुनाना कवि का उद्देश्य भी नही है, और इसे सुनने सुनाने के लिए आज समय भी किस के पास है ? आज के पाठक की मनोवृत्ति को पहचानकर युग-कवि महाभारत की कुछ दिव्य मणियाँ चुनकर ही कागज के श्वेत शुभ्र रजत थाल मे रखता है, पाठक को उनकी जीवन-दायिनी प्रेरणा से उद्वेलित करता है और उसके सामने एक वोध सूत्र छोडकर आगे चला जाता है । इसलिए प्रस्तुत काव्य का नाम भी वडा समीचीन है—'महाभारत के प्रेरणा प्रदीप ।' ये प्रेरणा दीप भटके हुए भ्रान्त मानव को न सिर्फ मार्ग दिखाते हैं, किन्तु सही दिशा मे चलने की प्रेरणा भी भरते है । इसलिए 'प्रेरणा-प्रदीप' नाम अधिक सार्थक व सगत लगता है ।

इन लघु काव्यो की रचना मे कवि का उद्देश्य जहाँ स्पष्ट ही उदात्त-जीवन दृष्टि का उद्घाटन व उद्वोधन है, वहाँ कवि स्वय भी वहुत व्यापक उदार व गुण-ग्राही दृष्टि से सपन्न है । उसमे न तो किसी सम्प्रदाय का पूर्व ग्रह है, न प्रतिवद्धता है, न खण्डन-मण्डन की रुचि है और न ही तेरा-मेरा की भेददृष्टि । कवि सपूर्ण मानवता को लक्ष्य मानकर मानवीय गुणो पर ही केन्द्रित होकर चला है । यही तो कवि का युगधर्म है । इसलिए जैन एव वैदिक महाभारत के कुल ४१ उदात्त प्रसगो का प्रणयन इस कृति मे हुआ है ।

कृति-समीक्षा

प्रस्तुत काव्य मे प्रेरणा-प्रदीपो को दो पक्तियो मे सजाया गया है । प्रथम पक्ति मे महाभारत के प्रमुख पात्रो की जीवन घटनाएँ अधिक हैं । द्रुपद-द्रोणाचार्य की मैत्री व द्रोह, कर्ण की दानवीरता, अर्जुन की सदाचार प्रवणता, दान के अहकार को दूर करना, द्रोपदी की क्षमा, एकलव्य की गुरुभक्ति आदि २३ ज्योतिर्मान दीपक हैं, वहाँ दूसरी पक्ति मे कुछ उपकथाएँ श्रीकृष्ण से सम्वन्धित प्रसग व तुलाधार वैश्य आदि की प्रेरणा ज्योति को घटना-प्रदीपो की वाती मे प्रज्ज्वलित किया गया है ।

प्रस्तुत कृति एक सर्वजनोपयोगी कविता है, इसे पढने मे, समझने मे किसी टीका या कुजी की आवश्यकता नही है । कविता इतनी सरल व भावोद्बोधिनी है कि पाठक पढता जाय, आगे समझता जाय । वास्तव मे ऐसे काव्य सिर्फ मनोरजन या

काव्यानन्द के लिए नही होते, किन्तु सरसता पूर्वक जीवन-दर्शन के लिए होते हैं। इनमे जीवन-सगीत की मधुर लय होती है। कविता अलकारो मे ढकी नवदुलहिन सी बन-ठनकर नहीं आती, पर वह चतुर, समझदार सीधी सात्विक जीवन-सगिनी की तरह हर कदम साथ चलने के लिए पूरा साथ निभाये चलती है। यही इस काव्य की सर्वोत्तमता और सर्वोपयोगिता है।

कवि की भाषा बडी सहज, चुस्त, अनुभूतियो से परिपूर्ण और चुटीली है। कुछ प्रसग उल्लेखनीय हैं—कर्ण के दान प्रसग पर—

धन हो चाहे पास मे दिया न जाता दान।
देने वाला ही यहाँ माना गया महान ॥[१]

कर्ण द्वारा कवच-कुण्डल का कठोर दान करने पर—

मलिनता मुख पर झलकी, देख छल होता हुआ।
दान वह भी दान क्या, दिल दे अगर रोता हुआ ॥[२]

कवि-उक्ति की सहजता व सचाई कितनी मार्मिक है,

इसी प्रकार भीम के परोपकार प्रसग पर बक-असुर का यह कथन काव्य सौन्दर्य की कसौटी पर कितना खरा उतरता है—

अरे दुष्ट डरता नही, क्यो खाता यह माल ?
माल जिसे तू मानता, माल नही यह काल।[3]

भाई के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कवि कितनी सहजता मे कितनी गभीर बात कह जाता है—

भारत की यह नीति रही है, भाई अपना भाई है।
कभी-कभी भाई-भाई में होती क्या न लडाई है॥
भाई कहाँ पीठ का मिलता, मिलता कचन गाँठ का
भाई से बढकर क्या होती, मीठी यहाँ मिठाई है ?[४]

भाई-भाई के मधुर व प्रगाढ सम्बन्धो की अभिव्यक्ति कितनी सरल व हृदय ग्राही है ?

कवि की शब्द-चेतना इतनी प्रबुद्ध व सशक्त है कि नीति, धर्म व दर्शन की गभीर पहेलियाँ भी बडी स्पष्ट व सुबोध भाषा मे प्रस्तुत करने मे कमाल दिखाती है। देखिए द्रोपदी की क्षमा प्रसग पर—

---

१ पृष्ठ ५०।
२ पृष्ठ ५१।
३ पृष्ठ ६०।
४ पृष्ठ ६२।

हिंसा का प्रतिकार न हिंसा, हिंसा का प्रतिकार अहिंसा[1]
प्रेम शान्ति सुख-धाम '' ''
हिंसक को क्यो मारा जाये, उसका हृदय सुधारा जाये,
सुना सत्य पैगाम''''''''
आग, आग से नही बुझाओ, जल बनने का मार्ग सुझाओ
पाओ सुख आराम'' ''''''

'अद्‌भुत दान' शीर्षक मे कवि दान की गभीर व्याख्या व दान की पद्धति का कितना मर्मस्पर्शी विवेचन करता है—

किसके लिए, किसे क्या देना, कितना देना, कब-कब देना
प्रश्न न लेते स्थान''''''''
देकर मन अभिमान न लाये, देकर मुख से गीत न गाये
दानी वही महान''' ''''

इस प्रकार यह सपूर्ण काव्य भी सूक्ति मुक्तियो का महासागर है तो सुविचारो का भडार ही कहा जा सकता है। सर्वत्र कवि की चिन्तना प्रवाहमयी विचार सरणि स्पष्ट सुलझी हुई और अभिव्यक्ति अत्यधिक चुस्त दुरुस्त है।

काव्य को पढते हुए कहानी का आनन्द और कविता की तन्मयता एक साथ अनुभव होती है।

रचयिता

इस काव्य के रचनाकार है जैन जगत के जाने-माने प्रबुद्धचेता अध्यात्मयोग के सिद्धयोगी, कविराज श्री पुष्कर मुनिजी महाराज। आप की वाणी ओजस्वी है तो गायन-स्वर, मधुर आकर्षक। कविता कला तो जन्मजात ही है। अब तक आपने हिन्दी-सस्कृत-राजस्थानी मे हजारो पद्यो की रचना की है। आपकी काव्य-कला की कुछ विशेषताएँ है जो अन्यत्र दुर्लभ है—

१ भाषा भावो को वहन करने मे पूर्ण सक्षम है
२ चिन्तन में स्पष्टता व तेजस्विता है
३ काव्य में लयात्मकता, गेयता के साथ साथ मनोहारी सहज तुकान्तता भी है।
४ कविता शब्दाडम्बर से रहित सहज व हृदयग्राही है।
५ काव्य मे सोद्देश्यता व लक्ष्य की स्पष्टता है।

---

१ पृष्ठ ८६   २ पृष्ठ ९१

६ गहन-गम्भीर बात को संक्षेप में सूक्त रूप देकर कहने की कला मे कवि पूर्ण दक्ष है।

७ काव्य की मात्रा भी विपुल है, और काव्य कला की उत्तमता व श्रेष्ठता भी अक्षुण है।

आप श्री स्थानकवासी जैन समाज के मूर्धन्य विद्वान सन्तो की गणना मे है। आपने जैन कथा साहित्य पर अब तक ८५ से अधिक पुस्तकें लिख दी हैं। गद्य-पद्य-दर्शन-काव्य कथा आदि सभी धाराओ मे आपकी अप्रतिहत गति है।

सुखद आश्चर्य तो यह है कि ऐसे सुयोग्य गुरु को सुयोग्यतम शिष्य भी मिले हैं श्री देवेन्द्र मुनि शास्त्री जी जैसे, जो आज जैन साहित्य के सिद्धहस्त लेखक व विचारक माने जाते हैं।

आशा है पाठक इस काव्य को जीवन-निर्माण की दृष्टि से न केवल 'स्वान्त सुखाय' वल्कि जीवन-नि श्रेयसे भी पढ़ेंगे

—श्रीचन्द सुराना 'सरस'



प्रकाशन सहयोगी :

सादर धन्यवाद

प्रस्तुत 'महाभारत के प्रेरणा प्रदीप' के प्रकाशन मे निम्न उदार चेता धर्मशीला बहनो एव धर्म-प्रेमी बन्धुओ ने गुरुभक्ति एव धर्म-प्रचार की भावना से प्रेरित होकर अर्थ सहयोग प्रदान किया है। तदर्थ हम आपके प्रति हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित करते है।

—मत्री

□ श्रीमती अखण्ड सौभाग्यवती धर्मानुरागिणी श्री सोहनबाई हस्तीमल जी सिघवी (राणावास) के वर्षीतप के पावन उपलक्ष्य मे

c/० **हस्तीमल महेन्द्र कुमार सिंघवी**

मु० पो० **राणावास** (मारवाड)

(२) **पारसमल हस्तीमल सिंघवी**

अलगुण्डाणी ओणी

मु० पो० **हुबली** (धारवाड) कर्णाटक

□ श्रीमती पूजनीया मातेश्वरी नानाबाई
की ओर से उनके सुपुत्र
श्रीमान भँवरलाल जी मेवाड़

MURLI FANCY LESS HOUSE
18, KACHI CHETI STREET
MADRAS—600 001

□ श्रीमान धर्मप्रेमी कन्हैयालाल जी गाँधी
c/o लालचन्द चम्पालाल गाँधी
७/२/८४७ पॉट मार्केट
सिकन्दराबाद नं० ३ (आंध्र०)

□ कमलकुमार शंकरलाल जी दुग्गड़
स्टेशन रोड, मु० पो० वीरार
जि० ठाणे (महाराष्ट्र)

□ शा० सेंसमल जी सोना जी विनाकिया खण्डप वाले
c/o शाह गौतमचन्द माणकचन्द
२४ ए, श्री श्रीनिवास क्लॉथ मार्केट
करनूल (आंध्र) ५१८००१

□

विषय-सूची

नोट —प्रसग कुल २३ हैं, किंतु ९ का अक भूल से रह जाने के कारण कृपया छपे अनुसार २४ पढे।

दूसरी पंक्ति



महाभारत के

प्रेरणा प्रदीप

□□

पद-पद पर है प्रेरणा
न्याय-नीति का स्रोत ।
शील-शौर्य-व्यवहार की
जैसे जगती ज्योत ।

प्रतिभा पौरुष, है प्रचण्ड
जिनका आत्मिक ओज ।
मुनि पुष्कर के काव्य के
विविध मनोहर पोज ।

□

मंगलाचरण

दोहे

ऋषभ जिनेश्वर से मिले, जीवन-सूत्र विशेष ।
जिससे हम सब बुन रहे, जीवन-वस्त्र हमेश ।।

चलती है वर्णावली, लेकर आदि अकार ।
आदिनाथ अवतार को, सब करते स्वीकार ।।

एक बिना चलता नही, आगे कोई अक ।
आदि जिनेश्वर धर्म की, आदि अमूल्य निशक ।।

महापुरुष मरते नही, रहते अमर हमेश ।
चलते उनके नाम से, धर्म और उपदेश ।।

हुआ महाभारत कभी, फिर भी प्यारा ग्रन्थ ।
भारतीयता का हमे, दिखलाता नव-पंथ ।।

न्याय और अन्याय का, दिग्-दर्शन है स्पष्ट ।
लिये न्याय के भी यहाँ, सहा जा रहा कष्ट ।।

बुरी तरह होता न क्या, अन्यायी का अत ।
एक महाभारत हमें, देता ज्ञान अनंत ।।

"मुनि पुष्कर" संसार का, है यह ग्रन्थ प्रसिद्ध ।
रुचि युत सुनते वांचते, बालक युवक प्रवृद्ध ।।

चुन चुनकर कलिकाएँ, सुमन, सुरभित अमल अपार।
मुनि सुमन ने गूंथा, इसकी महिमा अपार॥

गया संघ पर लिख रहे, गौरव गाथा देख।
नई भावना से सजे, ये सब सुलेख॥

देख देव आदर्श पर, सजना और निखार।
रखता है आदर से, मान और मनुहार॥

अगम सुगम सुगंध-सुमन, सुन्दर सुमन देख।
"मुनि सुमन" सुपर्ण से, सौरभ सदा विवेक॥

—०००—

प्रथम पंक्ति

1

गांगेय से भीष्म

ब्रह्मचर्य की महिमा :

तर्ज—प्यारे भारत में

भीष्म बने गागेय, भीष्मव्रत लेकर के।
ब्रह्मचर्य आदेय, भीष्म व्रत लेकर के… ।।
तप में ब्रह्मचर्य व्रत भारी, पूज्य ब्रह्मचारी नर-नारी।
देवो के श्रद्धेय, भीष्म व्रत लेकर के ।।
है शुक्राणु श्रेष्ठ मणि तन का, यही श्रेष्ठ बल है जीवन का।
परभव का पाथेय, भीष्म व्रत लेकर के ।।
तन स्थिर मन स्थिर, स्थिर शुभवाणी, धन्य-धन्य कहते हर प्राणी।
गाते सुयश सुगेय, भीष्म व्रत लेकर के ·· ।।
चाहे जिसके लिया गया हो, दृढतायुत प्रण किया गया हो।
है वह शक्ति अजेय, भीष्म व्रत लेकर के · ।।
सुनो महाभारत की शिक्षा, गगासुत की कडी परीक्षा।
यही प्रेय है श्रेय, भीष्म व्रत लेकर के ·· ।।

यमुना के किनारे :

तर्ज—राधेश्याम

नगर हस्तिनापुर, नृप शांतनु, यमुनातट पर रहे टहल।
शांति टहलना देता जैसी, शाति न देते राजमहल ।।

महासचिव थे साथ बात भी, करते थे इतिहासों की ।
धर्म, समाज, रिवाज, नीति पर, जन जन के विश्वासो की ।।
आई गंध अचानक मन को, बहुत विचित्र लगी प्यारी ।
फूल कौन से लगी खिलाने, किस विधना की फुलवारी ।।
फूल कौन सा ? रंग कौन सा ? पंखुड़ियो का क्या आकार ।
पता लगाने को उत्सुक मन, करने बैठा बहुत विचार ।।
रोका वही सचिव को सत्वर बढ़े अकेले ही आगे ।
वह आगे बढ सकता है जो, भय, शंका, लज्जा त्यागे ।।
खिचा हुआ फूलो से मन मे, बढ़ता जाता यथा मलिंद ।
बढते गए हस्तिनापुरपति,—शांतनु पूर्णतया स्वच्छन्द ।।

सत्यवती से भेट :

तर्ज—प्यारे भारत में

बैठी नावा मे, रखे चिबुक पर हाथ ।
बैठी नावा में, इक कन्या है शुभ गात ।।
ढला हुआ ज्यों सांचे मे तन, बैठा है सौन्दर्य सघन बन ।
चिन्ता की क्या बात, बैठी नावा मे· ·।
गध इसी के तन की आती, नृप को अपनी ओर बुलाती ।।
करने को साक्षात, बैठी नावा मे ।
रुककर खड़ा हो गया नरवर, नजर टिका कर उस कन्या पर ।।
विस्मय मन न समात, बैठी नावा में ।

दोनो देखते रहे :

तर्ज—राधेश्याम

कन्या ने जाना अब कोई, देख रहा है मेरी ओर ।
साहूकार बड़ा लगता है, बनकर रूप सुधा का चोर ।।
उठी, झुकी, नावा से उतरी, अभिवादन कर हुई खड़ी ।
कहिये क्या इच्छा है, फिर भी नजर रूप पर रही गड़ी ।।

उत्तर पाने की इच्छा से, कन्या की भी नजर उठी ।
नजर नजर मिलने का आशय, मन की मन के साथ घुटी ।।
कन्या मन अभिभूत हो गई, और देखती रही उसे ।
रहा देखता उसे नृपति अब, प्रेम परस्पर पले पुसे ।।

दोनों की बात :

दोहे

क्या इच्छा है बोलिये, बोली कन्या स्पष्ट ।
आने, रुकने का कहो, किया गया क्यों कष्ट? ।।
नृप बोला तुम कौन हो, दे दो परिचय पत्र ।
प्रेम नहीं परिचय बिना, नीति रीति सर्वत्र ।।

तर्ज--हरिगीति

हम गरीबो का ठिकाना, क्या बतायें आपको ।
सामने सब दीखता तब क्या छुपाये पाप को ।।
इधर वाले को उधर फिर, उधर वाले को इधर ।
पार करने के लिए हम, नाव पर रहते नृवर ! ।।

दोहे

सत्यवती कहते मुझे, पूज्य पिता सौदास ।
मौखिक परिचय पत्र पर, आप करे विश्वास ।।
तुम तो सुन्दर बहुत हो, और बहुत सुकुमार ।
उठा रही कैसे कहो, कठिन कार्य का भार ।।
क्या न कार्य कुलगत करूं, होकर मै सुकुमार ।
बोली कन्या ठिठक कर एक ठहाका मार ।।
करती है सुकुमारियाँ, गृह का कोमल कार्य ।
कठिन कार्य करते यहाँ, पुरुष परम्पर आर्य ! ।।
स्थितियो पर निर्भर न क्या, होते सारे काम ।
लिखा नही स्त्री-पुरुष का, किसी काम पर नाम ।।

निर्धारण करते यहाँ, गुरुजन और समाज।
इसीलिये रहते यहाँ, अस्थिर रीति-रिवाज ॥
होगे तेरे जनक फिर, लोभी हृदय-कठोर।
देते करने के लिए, कठिन काम पर जोर ॥
भली भाँति परखे बिना, कहिए नही कठोर।
लोभ न पैसे का उन्हे, मै कहती दे जोर ॥
जो कोई पैसे बिना, जाना चाहे पार।
कहते वे पैसे बिना, देना पार उतार ॥
कहिये राजन् ! आपको, क्या जाना है पार।
आओ, मै पैसे बिना, दूँगी पार उतार ॥

अंतिम निर्णय :

तर्ज—राधेश्याम

राजा सुनकर मौन हो गया, सुनकर निडर विचार भले।
ऊँच घराना वह कहलाता, जिसमें शुभ संस्कार ढले ॥
तन की सुन्दरता से बढकर, मन की सुन्दरता भारी।
रीझ गया मन ही मन राजा, समझ गया स्थितियाँ सारी ॥
पाणिग्रहण इससे करने का, दृढ निश्चय कर लिया तुरन्त।
निर्णय किए बिना कब आता, मन की अस्थिरता का अन्त ॥

धीवर और राजा :

धीवर की कुटिया के आगे, आकर शातनु खड़ा हुआ।
याचक बनकर आने वाला, दाता से कब बड़ा हुआ ॥
हाथ जोडकर धीवर बोला, कैसे आप पधारे नाथ !।
मै ही हाजिर हो जाता कर-लेते जो भी करनी बात ॥

दोहा

जिसको होता मागना, वह नर आता पास।
शातनु वोले, शाति से, सुनता है सौदास ॥

मुझसे चाहो मांगना, है क्या मेरे पास ।
कहिए क्या सेवा करे, सेवक यह सौदास ।।
योग्य स्थान भी है नही और नहीं उपहार ।
मीठे शब्दों के सिवा और नही व्यवहार ।।
महाराज ने फिर कहा, सुनिये धीवर-राज ।
मैं तो बहुत प्रसन्न हूं, राज-भक्ति से आज ।।
क्या आज्ञा फरमाइये, हाजिर है सौदास ।
देने में संकोच क्या, जो हो मेरे पास ।।
दे दो मेरे हाथ मे, सत्यवती का हाथ ।
और नही कुछ चाहिए, बस इतनी सी बात ।।
सत्यवती का नाम सुन, सन्न बना सौदास ।
घूमा उसके सामने, वह सारा इतिहास ।।

सत्यवती का वृत्त :

तर्ज—राधेश्याम

समय सुबह का सुहावना था, घूम रहा यमुना तट पर ।
बालसूर्य किरणे फैलाता, धीमे शय्या से उठकर ।।
लाली काली को ले भागी अँधेरे का नाम गया ।
कहता सूर्य करो जगवालो, जग कर कोई काम नया ।।
लो विश्वास स्वयं से, मुझसे, ले लो युद्ध प्रकाश अनन्त ।
भर उल्लास हृदय में कर लो, दु ख अधूरेपन का अन्त ।।
वृक्ष अशोक दे रहा छाया, शीतल मेरा तन मन था ।
एक निर्दयी पुरुष बालिका, गया फैंक वन निर्जन था ।।
मैने सोचा किसी युगल के, आँखों का होगी तारा ।
उनकी आंखों से बहती ही होगी गगाजल धारा ।।
उन्हें हानि है, मुझे लाभ है, मै अब तक हूँ नि सन्तान ।
मेरी पत्नी इसे पाल कर, पालेगी नवजीवन प्रान ।।

दोहा

तभी हुई आकाश से, एक मधुर आवाज।
कान लगा सुनने लगा, धीवर धीवरराज ॥

तर्ज–राधेश्याम

नगर रत्नपुर, रत्नागद नृप, रत्नवती की सुता भली।
किसी शत्रु ने पुत्र जान कर, हरण किया पुत्री निकली ॥
गया फैंक कर इसे यहाँ पर, कर्म-योग है ऐसा ही।
पालन तेरे घर पर होगा, नही लगेगा पैसा ही ॥
नगर हस्तिनापुरपति शातनु, व्याह करेंगे इसके साथ।
धीवर को सब याद आ गई, उस दिन जो भी बीती बात ॥
आज बात वह सत्य हो रही, शातनु मेरे द्वार खड़े।
खडे खड़े हो गए नृपति भी, देख विलब अधीर बड़े ॥

शांतनु और सौदास :

तर्ज–ख्याल की

क्या सोच रहे हो, जल्दी उत्तर दो मेरी बात का····। ध्रुव ॥
धीवर उत्तर देने मे तुम, देर लगाते भारी।
निर्णय शीघ्र नही लेने की, बहुत बड़ी बीमारी जी ॥ क्या····॥१॥
सत्यवती का हाथ नही क्या दोगे मेरे हाथ।
जो भी सोचा हो वह कह दो, स्पष्ट-२ सब बात जी ॥ क्या ···॥२॥
सत्यवती नृपरानी होगी, सोच रहा मन भोला।
क्षण मे बहुत दूर तक देखा, मुख से ऐसे बोलो जी ॥ क्या····॥३॥
राजा बोला सत्यवती यह, होगी मेरी रानी।
सत्य मान लो लिए सदा के, नृप शांतनु की वानी जी ॥ क्या····॥४॥
सत्यवती का अँगजात ही, सिंहासन पायेगा।
आप वचन यह देदे नरवर ! काम सफल हो जायेगा जी। क्या····।५॥

एक गंभीर प्रश्न :

दोहे

सुनकर धीवर का कथन, शांतनु बना गभीर ।
लगे सोचने गँग की छीनूँ क्या तकदीर ।।

धीवर कन्या-पुत्र से, उजलेगा कुरुवंश ।
उसके सिर पर क्या कभी, सोभेगा अवतंस ।।

पासा पलटा नृपति ने, बोले ऐसे बोल ।
लेना कन्या शुल्क क्या, कहा हृदय पट खोल ।।

राज कोष से मैं अभी, दिलवा दूँ दिल खोल ।
सुन सोचा सौदास ने, पिऊँ जहर क्या घोल ।।

निर्धन होकर भी न मै, करता निदित कार्य ।
शब्द न कन्या शुल्क का, सुनना भी स्वीकार्य ।।

शातनु लौटे महल मे, बनकर अधिक निराश ।
पहुँच गया है प्रेम से, कुटिया मे सौदास ।।

शांतनु की दशा :

शातनु अपने महल में, आकर पड़े निढाल ।
राज-काज की आज से, कौन करे संभाल ।।

नही भूख से प्यास से, नही नीद से काम ।
कामज्वरी को क्या कभी, मिल पाता आराम ।।

तिलतिल जलने से बना, मुखमडल निस्तेज ।
तेज दवा भी क्या करे, जो न पथ्य परहेज ।।

मन इच्छा पूरी न हो, तन हो जाता क्षीण ।
मन तन के सबंध पर, सोचे लोग प्रवीण ।।

गांगेय से बात :

चरण-वंदना के लिए, आये गगकुमार ।
देख दशा यों पूछते, बनकर बहुत उदार ।।

तर्ज—चुप-चुप

आपको क्या कष्ट है बताइये बताइये,
मेरे जैसे सुत से न, कुछ भी छुपाइये… ।।
कुछ नही वत्स ! सारा बुढापे का रोग है,
कर्मों का भोग ऐसा, ऐसा ही संयोग है ।।
जाओ, करो काम, ज्यादा मुझे न सताइये ।१।
सताने की बात नही, जानने की बात है,
करूँगा उपाय सारे जो भी मेरे हाथ है ।।
दूर मत भागो मेरे नजदीक आइये ।२।
तुम हो अकेले भाई कोई न तुम्हारे जी,
भाई के ही भाई होते प्यारे ओ सहारे जी ।
भावी का संपूर्ण भार अकेले उठाइये ।३।
कधे कुरुवशियो के होते कमजोर कब,
अकेले सभाल लेते राज-कारोबार सब ।
पुत्र के भरोसे भावी चिन्ता को मिटाइये ।४।

कारण का निवारण

दोहे

महामात्य के पास अब, आये गगकुमार ।
कारण जाना दर्द का, यमुना के उस पार ।।
पहुँच गए लेते पता, कुटिया मे अब गंग ।
धीवर-मुख से सुन लिया, बात चीत का रग ।।

तर्ज—राधेश्याम

धीवरराज ! पिताजी के सह, सत्यवती का करो विवाह ।
मै विश्वास दिलाता लेता-नही किसी की यहाँ सलाह ।।
सत्यवती का अंगजात ही बैठेगा सिहासन पर ।
मन आश्वस्त करो अपना तुम, मेरे इस आश्वासन पर ।।

राज्य त्याग कर दिया आपने, किन्तु आपके वंशज फिर ।
लिए राज्य के कलह करेगे उठा उठा कर अपना सिर ॥

गग पर प्रभाव

तर्ज—चुप-चुप

बड़ा बुद्धिमान है जी बड़ा बुद्धिमान है,
धीवरों का राजा यह तो बड़ा बुद्धिमान है....।

पुत्री के पुत्र पौत्र पौत्रो के पुत्र फिर,
करता सभी के लिए शासन का सूत्र स्थिर ।
शिक्षितों अशिक्षितो मे अंतर महान है ॥धीवरों १॥

मन है पवित्र मेरा गंगा का पुत्र मैं,
स्थापित करूगा त्याग, सेवा का सूत्र मै ।
माता की महानता का पुत्र को तो ज्ञान है ॥धीवरों २॥

साहस समेट बोले गग बडे रंग से,
ब्रह्मचर्य धारता मै मन की उमंग से ।
सूर्य चन्द्र देव साक्षी सारा जहान है ॥धीवरों ३॥

होगा न विवाह, होगी मेरे न संतान जी,
होगा न सघर्ष, होगी नही खीचातान जी,
ब्रह्मचर्य लेना मेरे लिए है आसान जी ॥धीवरो ४॥

सत्यवती देने को मै हो गया तैयार जी,
देते होगे आप मुझे मन से धिक्कार जी,
मेरी स्थितियो का होगा आपको तो ध्यान जी ॥धीवरो ५॥

बातो मे न लाभ अब, बात पूरी हो गई,
हो गया प्रभात काली रात पूरी हो गई ।
रथ में बिठाओ अथ शुभ हो प्रयाण जी ॥धीवरो ६॥

शंका दूर हो गई :

दोहे

धीवर बोला प्रेम से, सुन लो गुप्त रहस्य ।
ध्यान रहेगा आपको, इसका सदा अवश्य ।।१।।
पालित पुत्री के लिए, शर्तें रखी कठोर ।
वरना मैं देता नही, इतना भारी जोर ।।२।।
बोले गंगा कुमार अब, रहा नहीं दुर्भाव ।
पड़ता है हर बात का, मन पर नया प्रभाव ।।३।।
मुझे तुम्हारी बुद्धि पर, आता है अभिमान ।
सूझ-बूझ का जगत मे होता है सम्मान ।।४।।

सत्यवती मिल गई :

तर्ज—जय बोलो महावीरस्वामी की

सुत सत्यवती को ले आया ।
आदर्श त्याग का दिखलाया ।।सुत०· ·।।
मन व्यथित किंतु अब चकित बना ।
तन पुलकित शंका सहित बना ।
सुत ने क्या रास्ता अपनाया ।।सुत····१।।
सुत वही पिता को जो सुख दे ।
सुत नही पिता को जो दुख दे ।
बस इतना सा कह सिर नाया ।।सुत····२।।

सारी बात :

तर्ज—राधेश्याम

सत्यवती ने शांतनु नृप के, चरण छुए वृत्तान्त कहा ।
यहाँ पहुँचने के पीछे जो गंगा सुत का त्याग रहा ।।
तपस्विनी मा का सुत ऐसा, घोर तपस्वी है प्यारा ।
मैं क्या कहूँ, कहेगा इसको, धन्य धन्य महितल सारा ।।

दुष्कर घोर महादुष्कर व्रत, लेने वाले श्री गांगेय।
भीष्म पितामह कहलाते, है, आदर्शों के स्थान, अजेय ॥

कथासार :

दोहे

ब्रह्मचर्य में बल बड़ा कहता है संसार।
ब्रह्मचर्य के चरण में, प्रणमन बारम्बार ॥
ब्रह्मचर्य व्रत लीजिए, और पालिये शुद्ध।
विषय-वासना से करे, आप बराबर युद्ध ॥
ब्रह्मचर्य व्रत के लिए कही नही मत भेद।
शास्त्र पुरान कुरान सब, सम्मत चारों वेद ॥
दो हजार तेतीस का, रायचूर चौमास।
'तप' जप का साहित्य का, फैला नया प्रकाश ॥
श्री तारक गुरुदेव का, लेकर नाम उदार।
पुष्कर मुनिवर प्रेम से, करता धर्म प्रचार ॥

2

स्त्री का सेवा-भाव

नारी की उत्तमता :

दोहे

आर्य नारियो का रहा, सेवा ही आदर्श।
पति को परमेश्वर समझ, करती नित पद-स्पर्श ॥

पाणिग्रहण से प्रथम ही, हो सेवा का भाव।
इससे बढकर और क्या, होगा श्रेष्ठ स्वभाव ॥

सद्गुण श्रेष्ठ स्वभाव से, बनते पुरुष महान।
दुर्गुण दुष्ट स्वभाव से, गिर जाते इन्सान ॥

धृतराष्ट्र के लिए :

तर्ज–राधेश्याम

शांतनु-सत्यवती के अंगज, नृपति विचित्रवीर्य बलवान।
अल्प आयु मे हुए दिवगत, कारण जीवन-भोग-प्रधान ॥

तीन पुत्र धृतराष्ट्र, पाडु ओ-विदुर सभी ही थे बच्चे।
भीष्म पितामह ही थे इनके, अभिभावक रक्षक, सच्चे।

क्षमता के अनुसार समय पा-सभी योग्य बन पाये है।
थे धृतराष्ट्र नेत्र विरहित वे, प्रज्ञाचक्षु कहाये है ॥

सत्यवती ने कहा-भीष्म से, वत्स! विवाह करो इनका।
नही भरोसा कर सकता मन, गिरते-उठते यौवन का ॥

भीष्म की चिन्ता :

तर्ज—चुपचाप

जिनके न आखे उसे कन्या कौन देगा जी ।
दुराशीषे कन्यावाली बोलो कौन लेगा जी....।।
जन्म से ही अधा है यह व्याह कैसे करे हम,
जान बूझ पापवाली वृत्तियों से डरे हम ।
राजपुत्र बडा है तो दु.ख यह वरेगा जी ।१।

शीघ्र ही उपाय करो, वृत्तियों का हो सुधार,
देख-देख इसे चिन्ता हारे ही है बेशुमार ।
व्याह बिना कुरुवंश क्या चलेगा जी ।२।

पांडु और विदुर का व्याह पहले कैसे हो,
बड़े भाई अंधे धृतराष्ट्र जी के जैसे हो ।
लोक - व्यवहार हम से पलेगा जी ।३।

करके प्रणाम भीष्म उठकर आये है,
चारो ओर गुप्तचर अपने दौड़ाये है ।
लाए समाचार, काम अपना बनेगा जी ।४।

दूत और भीष्म :

दोहे

सुबल नरेश्वर की सुता, गाँधारी शुभ नाम ।
सुन्दर और सुशील है, शाँति प्रेम सुखधाम ।।
नही भोगहित त्यागहित, मानो धारी देह ।
गुण गाथा गाते चलो, कहीं न मिलता छेह ।।
बोले सुन गांगेयजी, होगा सफल प्रयत्न ।
जाओ सुबल नरेश से, माँगों कन्यारत्न ।।
कहो याचना मे नही, छल बल और दबाव ।
बालक के ही भाग्य का, देखा जाय प्रभाव ।।

गया दूत आदेश ले, पहुँचा है, गांधार ।
सुबल नरेश्वर का जुड़ा, बहुत बड़ा दरबार ॥

चिन्ता और निर्णय :

तर्ज–राधेश्याम

भीष्म दूत ने राज सभा में, आसन, आदर पाया है ।
जिसके लिए यहाँ पर आया, वह संदेश सुनाया है ॥
आज्ञा नही किन्तु है इच्छा, भीष्मपितामह के मन की ।
गाधारी की स्वीकृति दे दो, धृत के सह कर-पीडन की ॥
कहा दूत से सुनो अभी तुम, अतिथि-भवन मे लो विश्राम ।
न्याय, विवाह प्रेम-जागरण, धीरज से होते शुभ काम ॥

सुबल और शकुनि :

राजकुमार शकुनि उठ बोला, मुझे उचित लगता प्रस्ताव ।
इससे अपना बढ़ जायेगा, यवनों पर बल, तेज, प्रभाव ॥
जिसे भुजाओ का न भरोसा, तकता वही सहारा है ।
अधे को भगिनी देता तू, भगिनी का हत्यारा है ॥
तो क्या आप न स्वीकारोगे, ठुकरादोगे यह प्रस्ताव ।
गांधारी पर ही छोड़ूंगा, डालूंगा मै नही दबाव ॥
जैसा वह चाहेगी वैसा, मैं उत्तर दे दूंगा स्पष्ट ।
दिया नही जायेगा मुझसे, मेरी ही कन्या को कष्ट ॥
सारी सभा हो गई सहमत, कन्या का मन जाना जाय ।
राजपुरोहित को भेजा है, ले आने को उसकी राय ॥

सखियां-सखियां :

दोहे

समाचार पहुँचे प्रथम, गाधारी के पास ।
सखियों मे होते [illegible] भारी वचन-विलास ॥

सामूहिक गान :

तर्ज–जिण घर जाजे हे नींदडली

बाइसा ! नट जाया नट जाया, है समय विकट अति आया…।
हथणापुर रो दूत, आपरे, खातर मांगो लाया।
श्री घृतराष्ट्र जनम रा आंधा, परणीजण ऊम्हाया। बाइसा।१।
पूछण राज पुरोहित आवे, मन मे मत सकुचाया।
जो हुंकारो भरल्यो ला तो, ऊमर-भर पछताया। बाइसा।२।
कुण शृंगार निरख सी थारा, कुण निरखेला छाया।
चाहे रूप सजाया चाहे-आँसू बडा बहाया। बाइसा।३।
हुवो गरीब भलांइ वर री, हुओ निरोगी काया।
अंग-हीण रे लारे जाकर, किण नारी सुखपाया। बाइसा।४।
लाठी झाल्यां चाल्या आगे, सागे लेर जिमाया।
कोई कोनी कोई कोनी, कहकर भले ठगाया। बाइसा।५।
राज और धन ने के चाटे, मिनखा लारे माया।
जोड़ी रो वर नही हुवे तो, शरमा मरे लुगाया। बाइसा।६।
म्हाने राजी राखो तो, थे–सावचेत हो जाया।
सोच्या और विचार्‌या पहली, पछे नही पछताया। बाइसा।७।
हां, वां, कोनी कही पिताजी, कह्यो न कुछ भी भाया।
थांरै ऊपर छोड़ी है, अै—राजपुरोहित आया। बाइसा।८।

गांधारी के विचार :

दोहे

गाधारी ने रख दिए, सात्त्विक शुद्ध विचार।
त्याग और सेवा बिना हे सूना संसार॥

तर्ज–सेवो सिद्ध सदा सुखकार

मानव-जीवन का उद्‌देश्य, समझलो है सेवा और त्याग। ध्रुवपद।
बचपन से ही है मुझको तो, सेवा से अनुराग।
मैं तो इसे मानती अपना, बहुत बड़ा सौभाग। मानव।१।

नेत्र सहित से नेत्ररहित को, सेवा की अतिलाग ।
मुझे श्रेष्ठ अवसर मिलता है, मानो पुष्प पराग । मानव ।२।
रूप सजाना, रूप दिखाना, है यह भोग-विभाग ।
आत्मा से संबधित बन, मै—पाऊँ परम विराग । मानव ।३।
भिन्न विचार सभी रखते है, है संसार अधाग ।
नही एक फल वाले होते, दुनिया भर के बाग । मानव ।४।
सखियो ने सोचा, इस को तो—डँस गया काला नाग ।
कहना सो कह दिया, हमे क्या ? फूटे इसके भाग । मानव ।५।
चुप हो बैठी, लगी देखने, कैसे उठते झाग ।
होनहार होकर रहती है, कहते श्री वितराग । मानव ।६।

गांधारी का विवाह :

तर्ज—राधेश्याम

राजपुरोहित के आने पर, सखियो ने सब स्पष्ट किया ।
निर्णय पहले ही कर बैठी, समय आपने नष्ट किया ।।
समझाया है गाधारी को, ऊँचा-नीचा बहुत लिया ।
सोच समझकर दिया गया वह—उत्तर बारम्बार दिया ।।
आदर्शो को परिणत करना, वहुत कठिन बतलाया है ।
दीर्घदृष्टि से सोच समझकर मैने कदम बढाया है ।।
गांधारी का निर्णय लेकर, राजपुरोहित आये लौट ।
सुबल नरेश्वर के दिल पर कुछ, लगी आतरिक भारी चोट ।।
गांधारी की स्वीकृति पाकर, शकुनि हृदय मे फूल उठा ।
वोला, मै ले जाऊँ इसको, ब्याहूँ दिन अनुकूल जुटा ।।

दोहे

किया गया धृतराष्ट्र से, गाधारी का ब्याह ।
सातो बहने साथ मे, जिनकी एक सलाह ।।
गाधारी ने कर दिया श्रृंगारो का त्याग ।
त्याग और सेवा सदा, देते प्रेम अथाग ।।

कथासार :

करो त्याग सेवा करो, कहते संत हमेश ।
त्याग बिना सेवा नही, सत्य यही उपदेश ।।
"मुनि पुष्कर" पढ़ते रहो, सेवा के शुभलेख ।
जिन शासन सेवी हुए, जीव मुमुक्षु अनेक ।।
दो हजार तेतीस का रायचूर चौमास ।
तप जप का स्वर्णाक्षरी लिखा गया इतिहास ।।

आधार—जैनपांडव पुराण

3

गुरु भक्त एकलव्य

भक्ति महिमा—

तर्ज--कोरो काजलियो

गुरु की भक्ति करो, है भक्ति-मुक्ति दातार।
गुरु की भक्ति करो, मन श्रद्धा करो अपार ॥
पूर्ण समर्पण-भावना, जब हो जावे साकार।
जीवन नैया देखलो, तब हो जाती भव पार ॥१॥
गुरु के प्रति श्रद्धा न हो, हो केवल शिष्टाचार।
उसकी नैया डूबती, भवसागर में मझधार ॥२॥
गुरु ब्रह्मा, विष्णु गुरु, गुरु महादेव अवतार।
बलिहारी गुरुदेव की वे देते आँख उघार ॥३॥
एकलव्य गुरुभक्त ने, पाया था ज्ञान उदार।
अगूठे की दक्षिणा, देना कर ली स्वीकार ॥४॥
"मुनि पुष्कर" त्यागी गुरु कम मिलते है ससार।
गुरुदेवाय नमोनम. मुख बोलो बारंबार ॥५॥

वन मे गया :

तर्ज--राधेश्याम

गया धनुर्धर पार्थ एक दिन, पुष्प-करंडक वन मे जी।
क्रीडा-कौतुक करने की भी, इच्छा जगती मन मे जी ॥

वन की सुषमा देख-देखकर, मुदित हो रहा मन ही मन।
सुहावने दृश्यों से सुन्दर, मन को भाता वन ही वन ।।
विधा हुआ था मुख बाणों से दिखा सामने श्वान खडा।
उसे देखकर अर्जुन के मन, छाया है आश्चर्य बड़ा ।।
एक शक्ति से बाण चले सब, नही श्वान का मुख खुलता।
पीड़ा होती इसे जरा भी, तो पीड़ा से यह घुलता ।।
कौन धनुर्धर ऐसा जिसको, कहे दूसरा द्रोणाचार्य।
द्रोणाचार्य चकित हो जाते, अगर देख लेते यह कार्य ।।
वन में आगे भील खड़ा जो खेल रहा है बाणों से।
उसके सारे सही निशाने, प्यारे लगते प्राणो से ।।
मेरे से भी परम निपुण यह, कौन धनुर्धर जाग उठा।
परिचय उससे पूछ लिया है, मन का साहस धैर्य जुटा ।।

भील और अर्जुन :

गांव रुद्रपल्ली का वासी, एकलव्य है मेरा नाम।
पुत्र हिरण्यधनुष का हूँ मैं, कुल पुलिद शांति सुख धाम ।।
हुई कहाँ से प्राप्त कुशलता, धनुष चलाने मे भारी।
एकलव्य बोला, यह मेरे-गुरु की करुणा है सारी ।।
गुरु का नाम जानने को मन, उत्सुकता दिखलाता है।
प्रश्न पूछने वाला कितना, गहराई मे जाता है ।।
जग विख्यात धनुर्धर अर्जुन,-के गुरु मेरे गुरु प्यारे।
गुरु के बिना शिष्य का जीवन, कौन संवारे पुचकारे ।।

दोहे

श्री श्री द्रोणाचार्य का, जगत जानता नाम।
एकलव्य करने लगा, मन से वही प्रणाम ।।

अर्जुन की उदासी :

बातचीत पूरी हुई, आया अर्जुन लौट।
बुरी तरह मन पर लगी, बिना लगाये चोट ।।
इसकी तुलना मे नही, मेरा कोई तोल।
इस पर गुरुजी की कृपा, बरस पड़ी अनमोल ।।
यह कोली ही धन्य है, जो इतना होशियार।
सात बाण भी साथ मे जो सकता है मार ।।
गुरु ने मेरे साथ मे किया कपट व्यवहार।
अर्जुन के मन मे उठे, इतने बुरे विचार ।।
आया आश्रम मे तुरन्त, बन कर बहुत उदास।
एकलव्य करता वही, अपना बाणाभ्यास ।।

द्रोण और अर्जुन :

तर्ज—चुप-चुप

बोले द्रोणाचार्य शिष्य ! आज क्यों उदास जी।
कर रहे हो क्यो न बाण-विद्या का अभ्यास जी ।।
कारण उदासी का है, आप गुरुदेव ही,
मुझसे न पूछो, सोचो क्यो न स्वयमेव ही।
गुरु बोले बात पर डालिये प्रकाश जी ।।१।।
बाण मे निपुण मुझे बनाने की बात थी,
भील को भी आपने वह कैसे करामात दी।
मन मे उदास आज हो रहा है दास जी ।।२।।
तू ही मेरा शिष्य, शिष्य और कोई है नही,
तेरे जैसा निपुण चकोर कोई है नही।
करो मेरी बात का भी बडा विश्वास जी ।।३।।
आखो देखी बात भी क्या झूठी हुआ करती है,
पानी के बिना भी नावा रेत मे क्या तरती है !
गुरु एक होते, शिष्य होते है पच्चास जी ।।४।

वन में आ गये :

दोहे

लेकर गुरु को साथ में, अर्जुन आया तत्र ।
एकलव्य निज वाण से, वीध रहा है पत्र ।।
गुरु के आने का नही, पाया उसने भेद ।
भेद मिले तो फिर नही, सधता-राधावेध ।।
दोनो के मन मे हुआ बहुत बड़ा आश्चर्य ।
कौशल वडा कमाल है, वोल उठे गुरुवर्य ।।
आये चलकर पास मे, उसने किया प्रणाम ।
गुरु ने उसे उठा लिया, लिया भुजा मे थाम ।।
वत्स ! तुम्हारी निपुणता, देख हुआ आनन्द ।
रखने से क्या ज्ञान भी, रह सकता है वंद ।।
वत्स ! बताओ आपने, किससे पाया ज्ञान ।
अपने उत्तम शिष्य पर, गुरु करते अभिमान ।।
गुरु हो मेरे आप ही मै हूँ शिष्य विनीत ।
खीजे द्रोणाचार्य सुन, है यह कैसी रीत ।।
मै गुरु कैसे वन गया, विना सिखाये ज्ञान ।
शिष्य बता कर आपको, क्यो बनते नादान ।।

रहस्योद्‌घाटन

तर्ज—चुप-चुप

मेरे गुरु आप ही हैं मेरे गुरु आप ही,
आप ही के नाम की यह मै लगाता छाप ही ।
सीखने के लिए जब आया था मै पास मे,
रुचि रखता था बाण-विद्या के अभ्यास मे ।
कुलहीनो को पढाने मे बताया पाप ही ।।१।।

कुलवानो को ही ऊँचा ज्ञान दिया जाता है,
कुलहीनों को नीचा स्थान दिया जाता है।
कुल को ही माना गया जमाने का माप ही ।।२।।
मेरी प्रार्थना का कोई असर पड़ा नही,
आपने बताया मुझे कुल से बड़ा नही।
घर लौट आया मन हुआ पश्चाताप ही ।।३।।
प्रतिमा बनाई मैने गुरु देव आपकी,
प्रतिमा मे देखी शक्ति आपके प्रताप की।
करता भी साथ-साथ नाम वाला जाप ही ।।४।।
सीख पाया सब कुछ लगन अभ्यास से,
सीखता है शिशु जैसे नये विश्वास से।
गुरुदेव माता भ्राता त्राता और बाप ही ।।५।।
चलकर देख लो, जो हो न विश्वास जी,
गाव घर दूर नही यह रहा है पास जी।
देखने न जाना देख लिया यह मिलाप ही ।।६।।

दक्षिणा की मांग

दोहे

धन्य हो गया आज मै, पा गुरु का विश्वास।
गुरुचरणों मे गिर पड़ा, एकलव्य सोल्लास ।।

असमंजस मे पड़ गए, गुरुवर द्रोणाचार्य।
कैसे होगा पूर्ण अब, मेरा वांछित कार्य ।।

सर्वश्रेष्ठ अर्जुन नही, सर्वश्रेष्ठ एकलव्य।
सर्वश्रेष्ठ अमृत नही, सर्वश्रेष्ठ है गव्य ।।

हीन इसे कैसे करूँ, सूझा एक प्रकार।
वत्स! तुम्हारे पर हुआ, अब मेरा अधिकार।

गुरु दक्षिणा :

तर्ज--मेरा दिल तोड़ने वाला

अगर गुरु मानते हो तो, दक्षिणा लाइये मेरी ।
लीजिए दक्षिणा भगवन् ! यहाँ पर है नही देरी···।।
करोगे आप जो आज्ञा, वही हाजर करूंगा मै ।
दक्षिणा दे सकेगा क्या, शक्तियाँ तोल ले तेरी ।।१।।
तोल ली शक्तियाँ मैने, माँग लो आप तन मन धन ।
प्राण भी ये अभी दे दूँ, बनूँ मै भस्म की ढेरी ।।२।।
वत्स ! मै प्राण कैसे लूँ, जन्म है ब्रह्म कुल का जब ।
कहो इच्छा हुई है जो, तजो संकोच की घेरी ।।३।।

दोहे

देदो दाँये हाथ का, अपना प्रिय अंगुष्ट ।
मेरी है यह दक्षिणा, मै इससे संतुष्ट ।।
तुरन्त सर्मपित कर दिया, कर अंगूठा काट ।
दिखलाया गुरु भक्ति का, पावन रूप विराट ।।
एकलव्य पर देवता, बरसाते है फूल ।
कुल से ऊँचा कर्म है, तत्त्व यही अनुकूल ।।
देते द्रोणाचार्य अब, खुश होकर वरदान ।
अंगुलियों से भी किया, होगा सही निशान ।।

कथासार :

तर्ज--राधेश्याम

आये द्रोणाचार्य धनुर्धर, अपने आश्रम मे सानद ।
एकलव्य की भक्ति नदी की बहती धारा सदा अमंद ।।
कला भक्ति से, नाम कला से, एकलव्य ने अमर किया ।
'पुष्कर' हमे, महाभारत ने भक्ति-शक्ति का तत्व दिया ।।
कर्नाटक के इन क्षेत्रो में, धर्म प्रचार हुआ भारी ।
दो हजार तेतीस श्रावणी-पूनम आई सुखकारी ।।

आधार--जैन महाभारत

4

छल का फल

पीछे रह जाता :

तर्ज–जिणघर जाजे है नींदडली

पीछे रह जाता, नर छली और अभिमानी।
कपट क्रिया से एक बार नर, अगर सफलता पाता ।।
जब उसका फल आता तब वह, मन ही मन पछताता । पीछे १।
सत्य सरलता और सादगी कोई सा अपनाता।
जो अपनाता वह जीवन मे, पाता अति सुखसाता । पीछे २।
कपट कर्ण का खुला वर्ण भी, सत्य-सत्य बतलाता।
काम नही आयेगी विद्या, मिला शाप दुखदाता । पीछे ३।
झपट कपट की बुरी मान कर, तोड़ो इससे नाता।
"मुनि पुष्कर" महाभारत को, घटना एक सुनाता । पीछे ४।

आश्रम में कर्ण :

तर्ज–राधेश्याम

आश्रम मे पढते थे सारे, कौरव पाडव राजकुमार।
साथ कर्ण भी पढता जिसकी, बुद्धि तेज थी बिना शुमार ।।
अजब गजब का योद्धा भी था, शस्त्रास्त्रो का अभ्यासी।
बराबरी अर्जुन की करता, ईर्ष्या मन रखता खासी ।।
अर्जुन शत्रु, मित्र दुर्योधन, कर्ण मानता था मन से।
बहुत गुणी होने पर भी था, अति अभिमानी बचपन से ।।
दुर्योधन भडकाया करता, इसे पाडवो के विपरीत।
असफल बनी प्राप्त विद्या भी, परिणत हुई हार मे जीत ।।

एक दिन :

तर्ज—हरिगीति

एक दिन गुरु ने कहा, यो दे रहे उपदेश जब ।
बस तुम्हे ब्रह्मास्त्र विद्या ही बताना शेष अब ।।
मात्र इसके पात्र अर्जुन, एक तुम ही हो यहाँ ।
कर्ण बोला—ठीक है जी योग्य हम सब है कहाँ ।।
ब्रह्मविद्या मात्र रक्षण के लिये देते सुनो ।
मात्र रक्षण के लिए ही योग्य जन लेते मुनो ।।

स्पष्ट उत्तर :

दोहा

एक बार चुप हो गया, द्रोण सामने कर्ण ।
फिर बोला एकात मे पकड प्रेम से चर्ण ।।

तर्ज—राधेश्याम

अभय नही दे सकता क्या मै, रक्षा करने मे असमर्थ ।
मुझे न क्यों विद्या सिखलाते, इसका क्या होता है अर्थ ।।
मेरा पैर मगर ने पकड़ा, तब न छुड़ा पाये थे तुम ।
सुनकर बात यथार्थ कर्ण के, होश वही पर होते गुम ।।
क्षमा करे, वह भूल दुबारा, कभी नही हो पायेगी ।
निकली हुई हाथ से वेला, कभी न वापस आयेगी ।।
होना मुझे निराश पडेगा, सुन गुरु मौनी बने तुरन्त ।
दुर्योधन का मित्र कर्ण यह, ईर्ष्या से जलता अत्यन्त ।।
ब्राह्मण क्षत्रिय ही होते है, इस विद्या के अधिकारी ।
तुम तो सूत-पुत्र हो प्यारे, जान रही जनता सारी ।।

क्षमता क्षत्रिय में ही होती कष्टों में स्थिर रहने की ।
द्विज में क्षमता होती केवल कथा सजा कर कहने की ।।

दोहे

युवक शिष्य ब्राह्मण नही, है यह क्षत्रिय स्पष्ट ।
तभी देर तक सह सका, इस कीडे का कष्ट ।।

पूछा सच सच बोल तू क्या कुल है क्या वर्ण ?
सुनते ही घबड़ा उठा, मन ही मन मे कर्ण ।।

विद्या लेने के लिए, मैं बोला था झूठ ।
अपमानित हूँ द्रोण से, इतना सत्य अटूट ।।

झूठ बोल धोखा दिया, तुम हो धोखेबाज ।
शिष्य बनाया इसलिए, नही मारता आज ।।

तर्ज—राधेश्याम

धोखे से जो पाई विद्या, धोखा देगी तुम्हे अवश्य ।
तुम प्रयोग इसका भूलोगे, समझ लीजिए सत्य रहस्य ।।
परशुराम की वाणी सुनकर, कर्ण रह गया स्तब्ध वहीं ।
विद्या काम नही आयेगी, अपना जब प्रारब्ध नही ।।
पैर छुए माफी भी माँगी, विनय किया बेकार गया ।
परशुराम जी को क्या आती, क्षत्रिय सुत पर कभी दया ।।

कथासार :

दोहे

छल का फल होता यही, यही कथा का सार ।
मुनि पुष्कर करना भला, निश्छलता से प्यार ।।

जल मे जो अटकाव है, तो अटकेगी धार ।
दिल मे जो अटकाव है, तो अटकेगा प्यार ।।

सुनो महाभारत हमे, सिखलाता है ज्ञान ।
'मुनि पुष्कर' मन सरल बन, बनिये आप महान ।।

आधार—उद्योग पर्व (वैदिक)

5

दान का दोष

दान-विवेक :

तर्ज—कव्वाली

दान दिया बेकार गया, जो किया कभी अभिमान जी,
दिये दान का भान नही हो, यों कहते भगवान जी ···।
एक हाथ ने दिया दूसरा हाथ पता क्यों पाये जी ।
दिए दान के यशोगान पर नही लगाना कान जी ··॥१॥
देव दान की महिमा गाते, गाते महिमा नर-नारी ।
देने वाले दानी का तो, हो देने पर ध्यान जी ··॥२॥
द्रव्य क्षेत्र पर काल भाव पर, आधारित रहता है दान ।
इनसे ऊपर उठने वाले, दानी लोग महान जी ॥३॥
दानी, ज्ञानी, अभिमानी बन, गिर जाते है जीवन मे ।
हर प्राणी है ज्ञानी दानी, किया करो पहचान जी ··॥४॥
पुष्कर ! दान दिया करते है, होने वाले तीर्थंकर ।
मोक्ष मार्ग है चार, दान का उनमे पहला स्थान जी ··॥५॥

युधिष्ठिर का दान :

तर्ज—राधेश्याम

सूर्यदेव के समुपासन का, धर्मराज ने पाया फल ।
अक्षय पात्र प्राप्त होने से, जागृत बना असीमित बल ॥
जो चाहो, जब चाहो, वह सब, अक्षय पात्र दिया करता ।
रुकता नही, नही कम होता, ज्यों गिरि-निर्झर झर झरता ॥

एक योजना :

चला गया चुपचाप कर्ण अब, लगा ढूँढने रास्ता अन्य ।
जिससे गुरुजी ने यह सीखा परशुराम जी है वे धन्य ।।
वे केवल द्विज को सिखलाते, अन्य किसी को कभी नही ।
वास्तव मे सत्पात्र ज्ञान के, हो भी सकते सभी नही ।।
मैं ब्राह्मण का वेश बनाकर जाऊँगा पाऊँगा ज्ञान ।
लगा ललाटों पर क्या रहता, जाति वर्ण का अमुक निशान ।।
दुर्योधन से मिला समर्थन, अर्जुन से पीछे न रहो ।
ऊँचे अगर नही रह सकते, कम से कम नीचे न रहो ।।
पीछे रह जाने से अर्जुन, क्या न पराभव कर देगा ।।
मित्र वही जो मित्र-हृदय में, जोश-भावना भर देगा ।।

परशुराम जी के पास :

दोहे

कर्ण चला, आया तुरत, परशुराम के पास ।
कितना दुर्लभ था सुनो, अस्त्र-शस्त्र अभ्यास ।।
नमस्कार कर सामने, खडा हो गया आप ।
उदासीनता दीनता, मुख बतलाता साफ ।।
भद्र ! कौन हो ? किसलिए, आये बोलो स्पष्ट ।
बिना स्पष्टता कष्ट कब, हो भी सकता नष्ट ।।
भृगुवंशी भूदेव मैं, सभी तरह से दीन ।
अपमानित श्री द्रोण से, आश्रय-शक्ति-विहीन ।।

तर्ज—हरिगीति

द्रोण क्या भृगुवशियो का कर रहा अपमान भी ।
क्या उसे मेरे किये उपकार का है ध्यान भी ।।

ध्यान क्यों आये उन्हें ? तपलीन रहते आप तो ।
दूसरा कोई न मम सम खा रहा यह पाप तो ॥
शिष्य होता आपका जो दूसरा कोई बड़ा ।
द्रोण का अभिमान कैसे आज तक रहता खड़ा ॥

काम बन गया :

तर्ज–राधेश्याम

परशुराम जी बोले द्विजवर ! शिष्य नवीन बनाऊँगा ।
द्रोण तुल्य विद्याएँ सारी, उसको शीघ्र सिखाऊँगा ॥
भृगुवंशी द्विज मान इसे ही, शिष्य नया स्वीकार किया ।
नित्य नई विद्या बतला कर, ज्ञान सिधु का पार दिया ॥
सिखलाया ब्रह्मास्त्र अत मे, परशुराम जी हुए प्रसन्न ।
योग्य शिष्य से, योग्य मित्र से, क्या-क्या रखा जाय प्रच्छन्न ॥

कर्ण की क्षमता :

तर्ज–हरिगीति

घूमने वन मे गये गुरु शिष्य दोनो साथ मे ।
थक चुके थे बहुत लेकिन, मस्त थे निज बात मे ॥
शिष्य जघा पर टिका सिर, सो गए गुरु शाति से ।
तन थका हो, मन रुका हो, नीद आती शाति से ॥

तर्ज–राधेश्याम

कीडा लगा काटने जंघा, रक्त निकलने लगा तुरन्त ।
किन्तु कर्ण हिल नही रहा है, साहस धैर्य रखा अत्यन्त ॥
नीद टूट जायेगी गुरु की पैर जरा सा हिलने से ।
कष्ट नही मेरा मिटने का, हिलने से तिल-मिलने से ।
उष्ण रक्त की धारा ने जब, गुरु के कधे को छूआ ।
उठे अचानक हडबड़ करते, क्या कोई निकला चूहा ॥
देखा रक्त निकलता पूछा, भेद कर्ण ने स्पष्ट किया ।
गुरु ने सोचा द्विज हो करके, कैसे इतना कष्ट सहा ॥

क्षमता क्षत्रिय में ही होती कष्टों में स्थिर रहने की।
द्विज मे क्षमता होती केवल कथा सजा कर कहने की ॥

दोहे

युवक शिष्य ब्राह्मण नही, है यह क्षत्रिय स्पष्ट।
तभी देर तक सह सका, इस कीड़े का कष्ट ॥

पूछा सच सच बोल तू क्या कुल है क्या वर्ण ?
सुनते ही घबड़ा उठा, मन ही मन में कर्ण ॥

विद्या लेने के लिए, मै बोला था झूठ।
अपमानित हूँ द्रोण से, इतना सत्य अटूट ॥

झूठ बोल धोखा दिया, तुम हो धोखेबाज।
शिष्य बनाया इसलिए, नही मारता आज ॥

तर्ज—राधेश्याम

धोखे से जो पाई विद्या, धोखा देगी तुम्हें अवश्य।
तुम प्रयोग इसका भूलोगे, समझ लीजिए सत्य रहस्य ॥

परशुराम की वाणी सुनकर, कर्ण रह गया स्तब्ध वहीं।
विद्या काम नही आयेगी, अपना जब प्रारब्ध नही ॥

पैर छुए माफी भी माँगी, विनय किया बेकार गया।
परशुराम जी को क्या आती, क्षत्रिय सुत पर कभी दया ॥

कथासार :

दोहे

छल का फल होता यही, यही कथा का सार।
मुनि पुष्कर करना भला, निश्छलता से प्यार ॥

जल मे जो अटकाव है, तो अटकेगी धार।
दिल मे जो अटकाव है, तो अटकेगा प्यार ॥

सुनो महाभारत हमे, सिखलाता है ज्ञान।
'मुनि पुष्कर' मन सरल बन, बनिये आप महान ॥

आधार—उद्योग पर्व (वैदिक)

5

दान का दोष

दान-विवेक :

तर्ज–कव्वाली

दान दिया बेकार गया, जो किया कभी अभिमान जी,
दिये दान का भान नही हो, यों कहते भगवान जी ...।
एक हाथ ने दिया दूसरा हाथ पता क्यों पाये जी।
दिए दान के यशोगान पर नही लगाना कान जी ॥१॥
देव दान की महिमा गाते, गाते महिमा नर-नारी।
देने वाले दानी का तो, हो देने पर ध्यान जी ॥२॥
द्रव्य क्षेत्र पर काल भाव पर, आधारित रहता है दान।
इनसे ऊपर उठने वाले, दानी लोग महान जी ॥३॥
दानी, ज्ञानी, अभिमानी बन, गिर जाते है जीवन मे।
हर प्राणी है ज्ञानी दानी, किया करो पहचान जी... ॥४॥
पुष्कर ! दान दिया करते है, होने वाले तीर्थंकर।
मोक्ष मार्ग हैं चार, दान का उनमे पहला स्थान जी ...॥५॥

युधिष्ठिर का दान :

तर्ज–राधेश्याम

सूर्यदेव के समुपासन का, धर्मराज ने पाया फल।
अक्षय पात्र प्राप्त होने से, जागृत बना असीमित बल॥
जो चाहो, जब चाहो, वह सब, अक्षय पात्र दिया करता।
रुकता नही, नही कम होता, ज्यो गिरि-निर्झर झर झरता॥

दोहे

धर्मराज देने लगे, दोनों हाथो दान ।
दान मान से हो गया, मन में भी अभिमान ।।
याचक जन गाते सुयश, पाते इच्छित दान ।
जाते-आते बोलते–धर्मराज भगवान ।।
जय जय ध्वनि से गूंजते, धरा और आकाश ।
पाने का करते सभी, पूर्णतया विश्वास ।।
अन्न वस्त्र औषधि उचित, पाते सभी समान ।
इसे अधिक दो कम इसे, कहते नही जबान ।।
एक साथ सोलह सहस, ऊपर आये आठ ।
लिया द्विजो ने दान सब, बोले मगलपाठ ।।
प्रतिदिन का क्रम बन गया, देना इतना दान ।
यशोगान सुन धर्म का, जाग उठा अभिमान ।।
हरिश्चन्द्र शिवि नृपति से, मेरा ऊँचा स्थान ।
ऋषि दधीचि पीछे रहे, देख धर्म का दान ।।

श्री कृष्ण की चिन्ता :

तर्ज–हरिगीति

सोचते श्रीकृष्ण होता है अह से ही पतन ।
क्यो युधिष्ठिर को हुआ है दान का अभिमान मन ।।
दान का अभिमान इसका, तोड़ना है आज ही ।
पहुँचता पाताल मे ले साथ मे धर्मराज ही ।।

बलि से प्रश्न :

चरण धोकर कृष्ण के, बलि ने किया सत्कार जी ।
थी वहां पाताल में बलि की भली सरकार जी ।।
मुस्कराकर कृष्ण जी बोले तुरन्त बलिराज से ।
प्राप्त परिचय कीजिए आये हुए धर्मराज से ।।

आप भी दानी बड़े हो, और दानी ये बड़े ।
दानियों के द्वार पर धनवान भी होते खड़े ।।
सुन प्रशंसा कृष्ण से, बोले युधिष्ठिर एकदम ।
कृष्ण के ये शब्द भी मेरे लिए होते न कम ।।
सुर असुर मानव सभी गाते सुयश थे आपका ।
और डंका पीटते थे--धर्म के परताप का ।।
अब युधिष्ठिर के सुयश से, गूंजता आकाश है ।
दानियों के नाम से ही जगत में परकाश है ।।
बोल पाये बलि न मुख से, सुन प्रशंसा दान की ।
जानते थे वे स्वयं माया सकल भगवान की ।।
तीन पग वसुधा नही जब दे सका मै दान मे ।
फूलना मेरे लिए क्या दान के अभिमान मे ।।

तर्ज--राधेश्याम

सुनते ही यह बात युधिष्ठिर मन मे कुछ कुछ शरमाये ।
बलि के भाव बहुत गहरे है, अभी अभी जो फरमाये ।।

दूसरा मोड़ .

दोहे

आप जानते हो नही, जो है इनके पास ।
इनका अक्षय पात्र पर, बहुत बड़ा विश्वास ।।
ब्राह्मण नित सोलह सहस, करते ये संतुष्ट ।
दान सुयश सुन मन अहं, बना बहुत परिपुष्ट ।।

बलि के विचार :

तर्ज--प्यारे भारत में

बोले बलिराजा, यह कैसा है दान,
बोले बलिराजा, जिससे हो अभिमान···।
सदा मुफ्त का जो खायेगे, अकर्मण्य वे बन जायेगे।
होगी हानि महान। बोले बलिराजा····।

नित लेने को खडे रहेंगे, खा, पी करके पडे रहेगे।
भूलेगे सब ज्ञान। बोले बलिराजा··।
नही लिखेगे नही पढेगे, नही पढ़ायेगे न वढेगे।
होगा क्या उत्थान। बोले, बलिराजा····।
इसके भागी होगे दानी, दानी फिर होंगे अभिमानी।
बहुत बड़ा नुकसान। बोले बलिराजा···।
ऐसा दान उचित कब होता, उदित राष्ट्र का हित कब होता।
बनता मन निष्प्राण। बोले बलिराजा····।
जो कर्त्तव्य जगाता जाये, आलस दूर भगाता जाये।
दान वही भगवान। बोले बलिराज···।
श्रमी प्रसन्न रहा करते है, सुख दुख साथ सहा करते है।
जीवन कर्म प्रधान। बोले बलिराज····।

कथासार :

तर्ज--राधेश्याम

धर्मराज का अह गला है, समझ गये श्रम बहुत बड़ा।
श्रम की तुलना में कोई भी रह सकता कब दान खडा॥
युक्ति कृष्ण की काम कर गई, दान करो अभिमान नही।
सेवा करो, करो श्रम प्यारे श्रम से ऊँचा दान नही॥
श्रम से श्रमण शब्द संपूजित "मुनि पुष्कर" बतलाता है।
श्रम से जी न चुराना प्यारे, श्रम ही शाति प्रदाता है॥
दो हजार तेतीस भाद्रपद शुक्ल पक्ष नवमी तिथि सार।
रायचूर में पुष्कर मुनि ने, कथा लिखी धर करके प्यार॥

आधार—शांतिपर्व · महाभारत

—oooo—

6
कीचक का नाश

काम एक दुर्गुण :

दोहे

कामवासना भड़कती, तब करवाती नाश ।
साक्षी है इस कथन का, युग युग का इतिहास ।।
रावण की लंका गई, और हुआ प्राणान्त ।
रामायण का चित्र यह, है कितना दुखान्त ।।
कामुक कीचक का किया, इसी काम ने नाश ।
करे हरामी काम का, कौन यहाँ विश्वास ।।
काम नरक का द्वार है, काम दुख का मूल ।
मित्र नहीं यह शत्रु है, है परिषह अनुकूल ।।

सैरंध्री की पुकार :

तर्ज–राधेश्याम

नगर विराट विराट नृपति की, राज सभा में किया प्रवेश ।
सैरंध्री ने कहा-बचाओ, दुष्ट छेड़ता मुझे हमेश ।।
पीछा करते आया कीचक, सैरंध्री के मारी लात ।
हँसने लगा खड़ा होकर के, लगा शील के मन आघात ।।
राजन् ! आप प्रजा-पालक है, रक्षक न्याय प्रदाता है ।
देखो क्या करता है कीचक, जरा नही शरमाता है ।।

सुनाई नहीं हुई :

तर्ज—चुप-चाप

बोला नही राजा, कोई बोला नही एक भी।
किसी ने दिखाया नही अपना विवेक भी....॥
पीछे भाग आया और लात भी लगाई है।
हँसता है खडा खड़ा रानी जी का भाई है॥
भला आदमी तो ऐसे सकता न देख भी....।१।
कक भी क्या बोले उन्हे छुप छुप रहना था।
कह दिया तटस्थता, से जो भी कुछ कहना था॥
यक्षो से रक्षा करो, रखो धर्म टेक भी ।२।
सैरंध्री ने कहा—नृप हो गए क्या बल-हीन।
रोकते न अन्यायी को देखते हो बैठे सीन॥
किया गया इन्हे कैसे राज्य अभिषेक भी.. ।३।
देवियो के साथ मे अन्याय जब होता है।
राज्य का विनाश होता और राजा रोता है॥
किसी ने भी किया नही बात का उल्लेख भी. ।४।

भीम के पास :

तर्ज—राधेश्याम

पांव पटकती हुई, द्रौपदी, गई भीम से बात कही।
बात कही तब सोये सारे, और बहुत सी रात गई॥
कीचक ने दासी के द्वारा, फुसलाने का किया प्रयास।
दाहज्वर से मै पीडित हूँ, मुझे तुम्हारे पर विश्वास॥
तन पर हाथ फिराने से ही, तुरन्त स्वस्थ हो जाऊँगा।
देवी तुम्हे मान कर मन के श्रद्धा सुमन चढाऊँगा॥
समझ गई थी सब कुछ मैंने, दासी को फटकारा है।
कुपित हो गया कीचक उसको, कामराज ने मारा है॥

देखा मुझे अकेली उस दिन, छेड़ा तो मैं निकली भाग।
फिर भी कामी कीचक का है, मेरे प्रति अति ही अनुराग ।।
बात भीम ने सुनी योजना--कर ली है मिलकर तैयार।
न्यायी ही विजयी बनता है, अन्यायी खाता है मार ।।

मिलने की बात :

दोहा

सैरंध्री के सामने, बोला कीचक आप।
मेरी इच्छा पूर्ति कर, सात गुनह है माफ ।।

तर्ज-लावणी

मैं वहां मिलूंगी आप वहां पर आना।
मुझसे मिलने का है वह सही ठिकाना....।
मत छेड़ो, रास्ता छोडो, घर जाने दो।
मानो, मिलने का, वर अवसर आने दो।
है प्रेम भाव तो मेरा बहुत पुराना ।।१।।
सुन कीचक मन ही मन में फूल गया है।
पिछली फिटकारो को वह भूल गया है।
अब न्हाता धोता सजता वेश सुहाना....।।२।।
रात पड़े कब, कब मिलने को जाऊँ।
ले सैरंध्री को, अपने गले लगाऊँ।
मन लगा सुनाने मीठा मधुर तराना....।।३।।

भीम सो गया :

दोहे

इधर भीम सजने लगा, स्त्री का सुंदर वेश।
क्योंकि सहा जाता नही, दुख अपमान हमेश ।।
बनी नाट्यशाला बड़ी, सुंदर पडा पलंग।
भीम सो गया ओढ कर कर सोने का ढंग ।।

कीचक आधी रात में, आया धर उल्लास ।
बोला सैरंध्री उठो, हाजर है यह दास ।।
कौन जगे बोले, उठे, पडे शांति से भीम ।
पडा सडक पर हो बडा, ज्यो लोहे का बीम ।।
इसने सोचा नीद है गया लगाने हाथ ।
हाथ लगाते ही लगी, अजब-गजब की बात ।।
कौन जगाता है मुझे पापी दुष्ट हराम ।
सोने भी देगा न क्या, क्या है तेरा नाम ।।

युद्ध और मौत

तर्ज–राधेश्याम

स्त्री का वेश पहन कर कोई, पुरुष यहां पर आया है ।
कीचक लगा सोचने भगवन् ! आज बनी क्या माया है ।।
खैर, इसे क्या मैं धारूँगा, मारूँगा कर पाद-प्रहार ।
सदा मारने वाला भी तो, कही कही खा जाता मार ।।
मल्ल युद्ध छिड गया भयकर, दोनों भी कमजोर नही ।
नीरवता छाई थी सारे, सुनता कोई शोर नही ।।
कीचक का प्राणान्त कर दिया, शव को दबा दिया ऊपर ।
दरवाजे पर लिख डाला है, "मैंने मारा" रक्ताक्षर ।।
कीचक के मरने से सारे, पुर मे फैली ऐसी बात ।
सैरध्री के यक्षो के ही, होगे इस घटना में हाथ ।।
कौन पढेगा "मेरा मारा", पता नही सब बोल रहे ।
कौन खोलता पोल किसी की, अपना अन्तर तोल रहे ।।
आए सौ भाई कीचक के, सारे मारे गए यही ।
कामी, कामी के सहयोगी, सुख पा सकते नही नही ।।

कथासार :

तर्ज–प्यारे भारत में

शिक्षा लेलोजी, सुन कीचक की बात ।
परनारी को कभी न छेड़ो, अपनी अपनी बुनो उधेड़ो ।

मन हो अपने हाथ ।।शिक्षा-१।।
तन भी जाता मन भी जाता, अपयश ही अपयश छा जाता ।
जगना सारी रात ।।शिक्षा …२।।
विजय वासनाओं पर पाओ, जन्म जाति कुल नही लजाओ ।
रहो धर्म के साथ ।।शिक्षा ‥ ३।।
मुनि पुष्कर जगाता जाता, भ्रम का भूत भगाता जाता ।
पाता नित सुख सात ।।शिक्षा · ४।।

दोहा

दो हजार तेतीस का, आश्विन उज्ज्वल पक्ष ।
कथा पूर्ति सुख दे रही, पुष्कर मुनि प्रत्यक्ष ।।



7

सबसे बड़ा दुःख

भूख की महिमा :

तर्ज—कव्वाली

[1]भूख से बढकर नही है, दुःख इस संसार में ।
[2]सुख कही पर है नही, गर है तो है सुविचार में....॥
भूख जो होती नही तो पाप भी होता नहीं ।
[3]शक्ति है इसको मिटाने की यहाँ आहार में... ॥१॥
भूख हो जब पेट मे उपदेश तब लगता नही ।
पेट भर खाना खिलाओ लो मिला परिवार में....॥२॥
[4]भजन भूखे से न होता आपकी कंठी रखो ।
तृप्ति होती प्रगट अपने आप एक डकार मे....॥३॥
अनाहारी का समय कितना बताया शास्त्र में ।
जीव संसारी आहारी बात यह व्यवहार मे....॥४॥
महाभारत की कथा हमको रही ऐसे बता ।
बदल जाती है प्रथा कुछ जीत में कुछ हार मे....॥५॥

कुरुक्षेत्र के मैदान में :

तर्ज—राधेश्याम

मृत पुत्रों के दर्शन करने-हेतु आ रही गांधारी ।
पुत्रों के प्रति ममता होती, मां के मन मे अति भारी ॥

---

१ छुहा समा वेयणा नत्थि ।
२ ना सुख विच गृहस्थ दे, ना सुख छड्डु गयाह ।
सुख है विच विचार दे, साधु सरण पयाह ॥
३ बुद्ध ने कहा—पहले भोजन दो, फिर उपदेश दो ।
४. भूखे भजन न होय गोपाला, यह लो कठी यह लो माला ।

लाशों में से ढूंढ़ रही है, अपने बेटों की लाशें।
पता ढूंढ़ने कब देती है, ताशों पर जो हो ताशें ॥
रोती जाती और शवों को, एकत्रित करती जाती।
करुण भावना भरती जाती, आंसूड़े झरती जाती ॥
पास खड़े लोगों की छाती, फटती जाती क्रन्दन से।
धर्मराज यों बोल उठे है, तुरन्त देवकीनन्दन से ॥
पुत्र शोक से बड़ा दुःख क्या, होता मां के लिए कहो।
सुत ही सब कुछ होता मा के लिए यहां पर अहो-अहो ॥

प्रश्न पर प्रश्न

तर्ज–हरिगीति

द्वारिकापति मुस्कराये, सुन युधिष्ठिर का कथन।
गलत है क्या कथन मेरा, दीजिए चिन्तन मनन ॥
दुःख सबसे जो बड़ा, देखा न अब तक आपने।
जब लगेंगे आप हम सब, दुःख से दुःख मापने ॥
हे जनार्दन! दुःख जो, सबसे बड़ा बतलाइये।
कृष्ण बोले ठहरिये, मन से नही बड-बड़ाइये ॥

आम बना दिया :

तर्ज–तुमक लाखों प्रणाम

ऐसा काम किया, बना दिया तरु आम।
ऐसा काम किया, लगे आम ही आम ···॥
लटक रहे फल आम रसीले, मधुर-मधुर रस वाले पीले।
लेना होगा नाम। ऐसा····१॥
माना आम फलो का राजा, जिसका स्वाद और रस ताजा।
भरते सभी ललाम। ऐसा····२॥
खाओ दिन में और रात मे, चाहे लेलो कही साथ मे।
खाने मे आराम। ऐसा····३॥

चूसो चाहे रस कर पीओ, रक्त बढाओ सुख से जीओ।
यों कहते घनश्याम। ऐसा…४॥
मायामयी आम रस वाला, ललचा जाता आने वाला।
भले लगे कुछ दाम। ऐसा…५॥

भूख लगा दी :

तर्ज—राधेश्याम

आम लगा कर इधर लगाई, गांधारी को भूख बड़ी।
भूख दबा कर कब तक रोए, सुत पीड़ा से खड़ी-खड़ी॥
भूख असह्य हो गई ऐसी, रोया भी जाये कैसे।
खड़ा सामने आम बताओ, गांधारी खाये कैसे॥
मरे हुए सुत पड़े सामने, मां ललचाये खाने आम।
गांधारी के लिए उचित क्या, हो सकता है ऐसा काम॥
देखा इधर उधर भी देखा, देखा चारो ओर भला।
कोई नहीं देखता मुझको, सूझी मन में एक कला॥
तोड़ूं आम अभी दे झटका, खाऊँ भूख मिटाऊँ मै।
मरे हुए पुत्रो के शव ले, अपने पास लिटाऊँ मै॥

हाथ नहीं आये

दोहे

उठी तोड़ने आम अब, हाथ न आये आम।
थोडा-सा ऊँचा रहा, माया का यह काम॥
कैसे पहुँचे हाथ अब, सूझा रास्ता एक।
चढ सुत के शव पर न क्यों, एक बार लूँ देख॥
लाई सुत-शव खीच कर, रख कर उस पर पैर।
आम तोड़ने मे नही, अब लग सकती देर॥
फिर भी कर पहुँचा नही, हुई बड़ी हैरान।
भूख कलेजा चूँटती, हाय हाय भगवान॥
शव पर शव रख कर चढी, आम न आया हाथ।
गाधारी की समझ में, अभी न आई बात॥

शव पर फिर शव रख, रखा, चालू वही प्रयास ।
आम तोडने के लिए, ले मन का विश्वास ।।
शव पर शव चिनने लगी, पाने को फल आम ।
नीचे आने को नही, आम ले रहा नाम ।।
सौ पुत्रों के शव रखे, चढ़ी ढेर पर आप ।
बिना भूख करती नही, गांधारी यह पाप ।।

तर्ज--राधेश्याम

तोड़ न पाई आम श्याम ने, संकोची अपनी माया ।
ढेर न शव का, और आम की, नही वहाँ शीतल छाया ।।

समझ में आया :

तर्ज--प्यारे भारत में

युधिष्ठिर समझ गये, दु ख बड़ा है भूख ।
युधिष्ठिर समझ गये, लगा निशान अचूक····।।

बड़ी सयानी ऊँची नारी, गिनी गई रानी गांधारी ।
कैसा किया सलूक, युधिष्ठिर····।।१।।

प्रसव समय जब भूख सताती, कुतिया अपने सुत खा जाती ।
गला रहा जब सूख, युधिष्ठिर····।।२।।

मीठी भूख मिठाई फीकी, लोक धारणा कडवी तीखी ।
कर देती दो टूक, युधिष्ठिर····।।३।।

कथासार :

तर्ज--राधेश्याम

तुम राजा बनने वाले हो, इसका रखना ध्यान हमेश ।
प्रजा न भूखी रहे आपकी, अपनाओगे यह उपदेश ।।
आये को आश्रय दो भोजन, भारतीयता की पहॅचान ।
सुनते और समझते है हम, है मेहमान स्वय भगवान ।।
पीछे पूछो क्यो आये हो, हो तो सेवा करो सहर्ष ।
मुनि 'पुष्कर' इसमें रहता है, मानवतावाला आदर्श ।।
दीवाली के दिन रचना कर, पुष्कर मुनि मन पाता हर्ष ।
दो हजार तैंतीस साल है, जीवन उन्नति का शुभ वर्ष ।।

आधार—(महाभारत : स्त्री पर्व)

8

क्रोध की आग

क्रोध के दुर्गुण :

तर्ज–प्यारे भारत में

क्रोध की आग बुरी, जलता है संसार....।
क्रोध की आग बुरी, पलते क्रूर विचार....।

शांति प्रेम, सुख, जीवन जलता, खून उबलता, रोष उछलता।
छलता बिना शुमार। क्रोध....॥१॥

बुद्धि विवेक सभी सो जाते, दोष सभी साथी हो जाते।
हो जाता अधकार। क्रोध....॥२॥

क्रोधी नही देखता सुनता, गाली बकता मन गुन गुनता।
जिसका अर्थ न सार। क्रोध ॥३॥

क्रोध विजय पाने वाले को, शाति गीत गाने वाले को।
नमस्कार शतवार। क्रोध ...॥४॥

युद्ध के बाद :

दोहे

दुर्योधन की मृत्यु से, लगा बड़ा आघात।
पूछ रहा धृतराष्ट्र से, क्रोध अकेला बात॥
जिसने मारा पुत्र को, बहुत बली वह भीम।
मिलूँ भीम से मन यही, कपट रचा नि.सीम॥

लोहे का भीम

तर्ज–राधेश्याम

पुरुष प्रकृति के परम पारखी, समझ गए यदुनाथ तुरन्त।
मिलने के मिप से कर देगे, आज भीम के तन का अन्त॥
भीम वनाकर के लोहे का, खड़ा सामने किया गया।
लो कुरुराज! भीम से मिल लो, दिखला दो मन प्रेम दया॥

शीतल कर लो हृदय आपका, इसे लगाकर छाती से ।
शीतल होता हृदय प्रेम का, क्या न प्रेम की पाती से ।।
मन में जहर शहद वाणी में, दिखलाते बोले कुरुराज ।
बेटे ! भीम बढ़ो आगे तुम, करो नही मिलने की लाज ।।
मूर्ति नही लोहे की बढती, और बोलती नही जरा ।
लगी हुई थी कुरुपति के मन, बस मिलने की बड़ी त्वरा ।।
क्यों न बोलते, क्यो न खिसकते, लगते क्यो न गले मेरे ।
तेरे बिना मिले कैसे मन, इच्छित अर्थ फले मेरे ।।

श्रीकृष्ण का उत्तर :

तर्ज—हरिगीत

पांव भारी हो गए उठते उठाने से नही ।
जीभ भारी हो गई, हिलती हिलाने से नहीं ।।
भ्रातृ हत्या का किया है पाप इसने जो बड़ा ।
दब गया उस भार से, कैसे रहे सम्मुख खड़ा ।।

चूरा बना दिया :

सुन बढा धृतराष्ट्र आगे कस लिया है जोर से ।
मूर्ति बल से दब गई, उस वक्त चारो ओर से ।।
लोह का वह भीम चटका शब्द कडकड़ बोलता ।
बाहुएँ जो भिच गई, उनको न कोई खोलता ।।
मूर्ति का चूरा बनाया, देखते सारे रहे ।
शक्ति किसकी भी बताओ, जो उन्हे कुछ भी कहे ।।
क्रोध के आवेग मे कुछ भान रह पाया नही ।
लोह का चूरा बनाते जोर क्या आया नही ।।
चोट आई भीतरी मुख से लगा गिरने लहू ।
छोडकर घर भग रही हो सास से लडकर बहू ।।

मानसिक पश्चात्ताप :

तर्ज—प्यारे भारत में

लगे है पछताने, अब मन मे कुरुराज ।
लगे है पछताने, बुरा हो गया आज ।।

मैने किया भीम का चूरा, जोर लगाकर तन का पूरा ।
आया नही लिहाज । लगे....१।
क्या तेरे सुत जी जायेंगे, लडने को वापिस आयेंगे ।
क्या छीनेगे राज । लगे....२।
भीम नही क्या मेरा वेटा, मैं क्यों धर्म भुला कर वैठा ।
डूबा प्रेम जहाज । लगे...३।

श्रीकृष्ण वोले :

तर्ज--राधेश्याम

मरा नही है भीम, शोक मत करो भीम के मरने का ।
करो शोक जो करना चाहो, उग्र क्रोध के करने का ।।
मुझे नही वहलाओ माधव ! मैंने उसे अभी मारा ।
दुर्योधन जैसा था प्यारा, भीम मुझे वैसा प्यारा ।।
भीम नहीं वह लोहे की ही, मूर्ति वनाकर रखी हुई ।
पता वताने लगी स्वय की, दीर्घ भुजाये थकी हुई ।।

दोहा

गले लगाया भीम को, व्यक्त किया सतोष ।
रहा नही धृतराष्ट्र के, मन मे किंचित् रोष ।।

कथासार :

तर्ज—राधेश्याम

क्रोध शांत हो जाने पर ही, जागृत होता सत्य विवेक ।
बहुत बुरे परिणाम क्रोध के, बुद्धिमान नर लेते देख ।।
पाडव हुए प्रभावित आकर, सविनय करने लगे प्रणाम ।
'पुष्कर' प्रेम विवेक विनय से, लिया करो लेने का काम ।।
तारक गुरु की कृपा दृष्टि से, पाया मैंने जीवन दान ।
रचना के मिष उसी ज्ञान का, नितप्रति देता रहता दान ।।

आधार : (महाभारतः स्त्री पर्व)

9

न्याय की बात

न्याय चाहिये :

तर्ज—प्यारे भारत में

न्याय की बात सुनो, करो नही अभिमान···।
न्याय की बात सुनो, न्याय स्वयं भगवान···।
न्याय नीति पर जगत खड़ा है, सत्य, न्याय ईमान बड़ा है।
करो धर्म पहचान। न्याय····॥१॥
अपने आप न्याय हो जाता, अपने आप पाप सो जाता।
जब आता अवसान। न्याय····॥२॥
सत्ता लक्ष्मी जब डट जाये, मूल्य न्याय का तब घट जाये।
करवाये नुकसान। न्याय··॥३॥
गला न घोटो न्याय धरम का, फल भोगोगे किए करम का।
है सारे इन्सान। न्याय····॥४॥
मुनि पुष्कर न्याय में बोलो, देख प्रलोभन कभी न डोलो।
जय-जय न्याय महान। न्याय····॥५॥

राज सभा में :

तर्ज—राधेश्याम

दुर्योधन की राजसभा मे, कृष्ण दूत बन आये जी।
खड़े हो गए सारे उनको, ससम्मान बिठलाये जी॥
आने का कारण बतलाते, बोले ऐसे यदुनन्दन।
भाव व्यक्त करने पर होता, नही किसी का भी बन्धन॥

श्री कृष्ण और दुर्योधन :

तर्ज—हरिगीति

पांडवों को राज्य दो अब शर्त पूरी हो चुकी ।
रह चुके अज्ञात वे सब, बात चलती कब रुकी ।।
राज्य मिलता मांगने से ? व्यग कुरुनृप ने कसा ।
शर्त के अनुसार सच है, बीच में अब क्या फसा ।।
क्यों न हो चाहे किसी की, हो गया अधिकार जब ।
हो गई धरती उसी की, समझिये सरकार अब ।।
मांगते ब्राह्मण यहाँ पर, मांगते क्षत्रिय नही ।
है न वे क्षत्रिय यहाँ पर युद्ध जिनको प्रिय नही ।।
भोगते है वीर नर धन और धरती नारियाँ ।
कायरो की नारिया खिचवा चुकी है साडियां ।।
भाइयो मे हो न विग्रह, चाहता हूँ मैं यही ।
राज्य लेना भूल जाये, मार्ग उत्तम है यही ।।
राज्य जो पूरा न दो तो, या सही आधा सही ।
या नही आधा नही कमती नही कुछ भी नही ।।
प्रान्त दे दो पांच, इस से सधि भी हो जायगी ।
बात देने की मुझे भाई नही फिर भायगी ।।
गांव ही दो पाच, पाचो भाइयों को प्रेम से ।
युद्ध से डरता जगत रहिये सभी मिल क्षेम से ।।
मै सुइ की नोक जितनी भूमि दे सकता नही ।
गाव की है बात कोसो, नाम ले सकता नही ।।

अन्तिम निर्णय

तर्ज—राधेश्याम

क्या यह अतिम निर्णय है ? हाँ, अन्तिम निर्णय दिया सुना ।
असफल रहा प्रयास कृष्ण का, मार्ग युद्ध का गया चुना ।

दुर्योधन ने पहचाना स्वर, बात बदलते हुए कहा ।
छोडो बात चलो अब भोजन, करने थोड़ा समय रहा ।।
आप अतिथि है भोजन करके, करिए हमको आज कृतार्थ ।
दूत पाडवो का हूँ, मै तो अतिथि आपका नही यथार्थ ।।

कथासार :

अभिमानी दुर्योधन नृप ने, बात न्याय की सुनी न एक ।
बुद्धि न काम दिया करती है, अत सन्निकट आया देख ।।
न्याय पांडवो के हक मे था, विजय पांडवो ने पाई ।
मुनि पुष्कर का कथन श्रवण कर, बनना ही होगा न्यायी ।।
दो हजार तेतीस पोष की पुण्य पूर्णिमा आई है ।
न्याय नीति की महिमावाली कथा बनाई गाई है ।।

आधारः—महाभारत, उद्योग पर्व

10

कर्ण का दान

दोहे

धन हो चाहे पास मे, दिया न जाता दान ।
देने वाला ही यहाँ, माना गया महान ।।
दानवीरता कर्ण की, देखो जगत प्रसिद्ध ।
कवच दिया कुँडल दिये, किया सत्य बल सिद्ध ।।

अपना अपना पक्ष

तर्ज–राधेश्याम

लगे युद्ध की तैयारी में, कौरव पांडव दोनो पक्ष ।
पक्ष प्रबल करने मे सारे, लगे, सखा साथी प्रत्यक्ष ।।
दुर्योधन का परम मित्र था, कर्ण कवच-कुँडलधारी ।
इसे मारने वाला कोई, जनमा नहीं धनुर्धारी ।।
समझाने पर भी न कर्ण ने, दुर्योधन का छोडा साथ ।
साथ नही छोडा जा सकता, जब हो जाती पक्की बात ।।
अर्जुन मित्र इन्द्र ने सोचा, मुझे कवच-कुँडल लेना ।
अर्जुन मेरा परम मित्र है, साथ उसी को है देना ।।

कर्ण के द्वारा :

तर्ज–हरिगीति

वृद्ध द्विज का वेश धर कर, आ गए सुरराज जी ।
देहि भिक्षा देहि भिक्षां, दी मधुर आवाज जी ।।
कर्ण बोले, बोलिए द्विज ! क्या करूँ सेवा भला ।
धान्य, धन, भोजन, वसन, लो मांग जिस पर मन चला ।।

है नही इनकी जरूरत, मांग कर मैं क्या करूँ ।
जो जरूरत है, उसी को माँगने से मन डरूँ ।।

मांगिये जो चाहिए पूरी करूँगा मांग मै ।
दान देने के विषय में भर न पाता स्वाग मै ।।

मांग लोगे प्राण तो भी हिचकिचाऊँगा नही ।
दान पर श्रद्धा जमी उसको डिगाऊँगा नही ।।

प्राण भिक्षा मांगने का है मुझे अधिकार क्या ? ।
मांग लूँगा जो, वही देना तुम्हें स्वीकार क्या ? ।।

कवच - कुँडल साथ में जनमे हुए दे दीजिए ।
दान दे, भूदेव से वरदान भी ले लीजिए ।।

है न ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र है ये आप ही ।
मित्र की हित-कामना से मागना क्या पाप ही ?

माँग कर कुडल - कवच ये मांगते है प्राण जी ।
पर न पीछे मै हटूँगा, दे वचन का दान जी ।।

कवच - कुडल छील डाले, धार वाली ले छुरी ।
बात सच्ची हो गई क्या बहुत अच्छी क्या बुरी ।।

मलिनता मुख पर न झलकी, देख छल होता हुआ ।
दान भी वह दान क्या, दिल दे अगर रोता हुआ ।।

वरदान लो :

दोहा

दान-वीरता देखकर, बने इन्द्र अभिभूत ।
असर डालता दान वह, जो हो सत्य प्रसूत ।।

प्रगटे असली रूप मे, बोले बने प्रसन्न ।
बदले मे कुछ मांगिये, देता एक वचन्न ।।

तर्ज—राधेश्याम

देवराज ! बदले मे कुछ भी, लेना नही अभीप्सित है ।
देने वाला लिया न करता, देने मे हित सुविदित है ।।

इतना आग्रह करने पर भी, कर्ण नही कुछ भी लेते ।
लेते नही माग कर जो नर, उन्हे देवता भी देते ।।

प्राणो का भी मोह न मन को, अन्य वस्तु क्या चाहोगे ।
शक्ति अमोघ तुम्हे देता मै, प्रेम सहित अपनाओगे ।।

प्राणो पर जब सकट आये, तब इसका करना उपयोग ।
सारे शत्रु भस्म कर देगी, ले लो है यह शक्ति अमोघ ।।

शक्ति अमोघ कर्ण ने पाई, दानवीरता के द्वारा ।
इन्द्र प्रशंसा करता, करता क्या न प्रशंसा जग सारा ।।

मुनि पुष्कर ने लिखे प्रेम से चुने हुए ये भव्य प्रसग ।
रग अलौकिक प्रस्तुत करते, यथा उदधिगत नव्य तरग ।।

श्रवणवेलगोला मे आये, आई आखातीज भली ।
वर्षीतप के हुए पारणे, खिली सघ की कली-कली ।।

आधार—महाभारत : वन पर्व

11

एक सेर सतुवा

नेवले की बात :

तर्ज–नरम बनो जी नरम बनो

नही मिला जी, नही मिला, जो सोचा वह नही मिला ।
नही मिला जी, नही मिला, कहता है सिर हिला-हिला·· ।
सोने का था आधा अग, बाकी का नैसर्गिक रग ।
मुख-मण्डल था खिला-खिला । जो ·१ ।
एक नेवला करता स्नान, मिला जहाँ भी जल का स्थान ।
कीचड़ चाहे सिला - गिला । जो·· २ ।
हुआ जहाँ पर हवन विशेष, हुए जहाँ पर थे उपदेश ।
पावन मानी गई इला । जो ३ ।
बोल रहा नर वाणी मे, शक्ति नही हर प्राणी में ।
इचरज से दिल रहा हिला । जो ४ ।

धर्मराज का प्रश्न :

तर्ज–राधेश्याम

धर्मराज ने पूछा भाई, क्या सोचा क्या नही मिला ।
बोल बोल कर मानव वाणी, इचरच कैसे रहा दिला ।।
बहुत विशाल यज्ञ मे इतने, द्विज, ऋषि, क्षत्रिय जन आये ।
भोजन से सन्तुष्ट बने मन, दान-दक्षिणा भी पाये ।।
इससे कितना ही ऊँचा था, एक सेर सतुवा का दान ।
देने वाले चारो प्राणी, थे तुमसे वे बहुत महान ।।

धर्मराज ने फिर पूछा वह, कौन दीन परिवार कहो।
एक सेर सतुवा वह कैसा, सब कुछ कर विस्तार कहो ॥

दोहा

कहा नेवले ने सुनो, कान लगाकर ध्यान।
सुने बिना मिलता नही, पुण्य-पाप का ज्ञान ॥

ब्राह्मण की कथा :

तर्ज--कोरो काजलियो

बोला नेवला, तुम सुनो कथा रसदार।
बोला नेवला, है सुनने मे ही सार ॥
रहता था कुरुक्षेत्र मे, इक बहुत दीन परिवार ।१।
द्विज, पत्नी, सुत, सुतवधू, थे घर मे प्राणी चार ।२।
चारो ही सादे बडे, थे धार्मिक मन सस्कार ।३।
उञ्छवृत्ति से जी रहे, थे ऊँचे बहुत विचार ।४।
दोषी रोषी भी नही, थे सतोषी अनपार ।५।
संग्रह करते थे नही, रखते प्रभु का आधार ।६।
राम नाम जपते सदा, मन रटते नित ऊँकार ।७।

अकाल के दिन :

दोहे

एकबार सूखा पडा, उपजा नही अनाज।
पशु पक्षी मरने लगे, दुखी बना द्विजराज ॥
खेत कटे दाने गिरे, तो हो दाने प्राप्त।
हो जाता दानों बिना, जीवन शीघ्र समाप्त ॥
द्विज के घर होने लगे, बहुत बार उपवास।
भूखे रहने का इन्हे था पूरा अभ्यास ॥
बिना अन्न जीवन नही, जीवन बिना न प्रान।
"अन्न वै प्राणा" सही, कहते श्री भगवान ॥

यदुक्त :

(मोती कण मंहगा किया, सस्ता किया, अनाज।
तुलसी तब ही जानिए, प्रभुवर गरीब निवाज ।।)

एक सेर जौ :

गये सभी बाजार में, लगे बीनने धान।
मुश्किल से जो सेर पा, आये अपने स्थान ।।
सत्तू सेर बना लिया, किए, भाग फिर चार।
चारो को ही चाहिए, यथायोग्य आहार ।।

अतिथि देव :

भोजन करने को हुए, चारों अब तैयार।
अतिथि देव आये वहाँ, द्विज इक उनके द्वार ।।
द्विज ने उस द्विज अतिथि को, बिठलाया निज पास।
अपना भाग उसे दिया, लिया प्रेम का सांस ।।
खाकर तृप्त हुए नही, उतने से द्विजदेव।
भाग ब्राह्मणी ने दिया, उठ करके स्वयमेव ।।
फिर भी उस द्विज की क्षुधा, हुई नही उपशात।
दिया पुत्र ने भाग निज, गुन गिनकर एकांत ।।
तृप्ति नही द्विज पा सका, पा करके आहार।
पुत्रवधू ने दे दिया, अपना भाग उदार ।।
चारो भागों से मिला, द्विज को अति सतोष।
चारो से कहने लगा, अतिथि देव निर्दोष ।।

एक ज्योति :

तर्ज—राधेश्याम

जगह जगह पर हर उत्सव पर, मैने भोजन पाया है।
जैसा आज प्रेम से खाया, वैसा कभी न खाया है ।।
आज हुई संतुष्टि परम मन, सारा सतुवा पाने से।
चारों हर्षित हुए वचन सुन, द्विजको आज खिलाने से ।।

ब्राह्मण जहाँ खडा था ज्योति, प्रगट वहाँ पर हुई तुरन्त ।
उसमे से ध्वनि लगी गूँजने, जिसकी महिमा का क्या अत ।।

तर्ज--सेवो सिद्ध सदा

आओ, बैठो, चलो, स्वर्ग मे, लेने आया तुम्हे विमान ।ध्रुवपद।
स्वय धर्म मै द्विज बन आया, पाया अति सम्मान ।
तुम्हे धर्म का और दान का, मिला श्रेष्ठतम ज्ञान ।आओ १।
एक विमान स्वर्ग से उतरा चमक उठा आसमान ।
गये स्वर्ग मे सभी बैठकर दे सत्तू का दान ।आओ २।
मै था हाजिर देख रहा था घटना दिव्य प्रधान ।
ब्राह्मण के कर धोए जल में, मैं कर पाया स्नान ।आओ ३।
आधा ही तन भीग सका वह, बना स्वर्ण अम्लान ।
आधा अग रहा वैसा ही, जैसा मिला निदान ।आओ ४।

वह नहीं मिला

तर्ज--राधेश्याम

यज्ञ यहाँ पर बहुत बड़ा था, बड़ा यहाँ पर दान हुआ ।
सोने का बन जाऊँगा मै, ऐसा मन मे भान हुआ ।।
भीगा नही, डुबकियाँ मारी बना नही मै सोने का ।
एक सेर सत्तू से ऊँचा, दान नही यह होने का ।।

कथासार ·

सुनकर सत्य युधिष्ठिर आदिक, सभी अचभित बने महान ।
इतने बडे यज्ञ से ऊँचा, एक सेर, सत्तू का दान ।।
मुनि पुष्कर की चुनी हुई ये मणियाँ कितनी चमकीली ।
मूल्यवान सारी की सारी, हो चाहे पीली-नीली ।।
भद्रबाहु की गुफा श्रेष्ठतम बाहुबली की प्रतिमा भव्य ।
श्रवणबेलगोला मे पुष्कर, मुनि ने रचना की यह नव्य ।।
दो हजार चौतीस साल मे, मास भला वैसाख मिला ।
भले योग जब आते है तब देते कवि को सुयश दिला ।।

आधार—महाभारत : शाति पर्व

12

परोपकारी भीम

।रोपकारी लोग .

तर्ज--कव्वाली

परोपकारी पुरुषों का ही, जीवन धन्य यहाँ पर है ।
इने-गिने ही होते है वे, मिलते अधिक कहाँ पर है ।।
तरुवर फल खाते न स्वय पर परहित फलते रहते है ।
पिया नही करती नदियाँ जल, बहती किन्तु निरंतर है ।।१।।
परोपकारी संत विचरते, हितकारी देते उपदेश ।
समझाने के लिए स्वय ही, कर लेते प्रश्नोत्तर है ।।२।।
द्विज को जाने दिया नही, कुती ने सुत को भेज दिया ।
टला "एक चक्रा" का भय वह, मारा गया बकासुर है ।।३।।
सुनो महाभारत की शिक्षा, परोपकारी बनो सभी ।
पुष्कर सत परम उपकारी, होते श्री तीर्थंकर है ।।४।।

वनवास मे ·

तर्ज--राधेश्याम

पुरी एकचक्रा मे पाडव, सुख से बिता रहे वनवास ।
गुणी देवशर्मा द्विज पत्नी, सावित्री पर कर विश्वास ।।
कुती माता को माता सम, और पाडवो को भाई ।
मान रहे थे ये घर वाले, कमी नही कोई आई ।।

रुदन क्यों :

दोहे

कुन्ती के कानो पड़ी, रोने की आवाज ।
मां ने पूछा भीम से, क्यो रोते ये आज ।।
बेटा बोला मां उठो, जाओ लाओ बात ।
ये हम सारे एक है, रहते है जब साथ ।।
सुन पहुँची कुन्ती तुरत, देखा द्विज का हाल ।
एक दूसरे के लिए, करते सभी खयाल ।।

तू नहीं, मै :

तर्ज–राधेश्याम

पति कहता है निज पत्नी से, जाने दे तू रोक नही ।
मेरे जाने का किंचित भी, पीछे करना शोक नही ।।

मै मुखिया परिवार का, मेरा यह दायित्व ।
कोई ले आता नही, जीवन का स्थायित्व ।।

पत्नी बोली नही नही मै, तुम्हे नही जाने दूंगी ।
मेरे रहते हुए आप पर, संकट क्यों आने दूंगी ।।
कौन भरण, पोषण कर सारे, बच्चो को सभालेगा ।
जाने मुझे दीजिए प्रियतम, परमात्मा बल भर देगा ।।
वेटा वोला माँ मत बोलो, जाओ दोनो आप नही ।
मेरा जाना वहुत उचित है, होगा कोई पाप नही ।।
काम आ सका अगर आप के, होगा मुझे बहुत सतोष ।
मेरे मरने से कोई भी, नही उपज पायेगा दोष ।।

कुन्ती से वात :

कुन्ती वोली मुझे वाताओ, क्या सकट घर पर आया ।
घर पर नही शहर पूरे पर, वक राक्षस का डर छाया ।।
वारी वँधी हुई घर-घर की, गाडी भर भोजन नर एक ।
जाये प्रतिदिन वक खा जाये, यह अन्याय और अविवेक ।।

राजा क्या न भेजकर सेना, राक्षस को मरवा देता।
राजा तो कायर है उसका, नाम नही मुख से लेता॥
नगरवासियों ने ही मिलकर, नई व्यवस्था की कायम।
आज हमारी वारी आई, जाने को जिद करते हम॥
मै जाऊँ में जाऊँ मे ही, लगा हुआ सारा परिवार।
एक दूसरे को होता है, एक दूसरे से भी प्यार॥

कुन्ती का निर्णय :

तर्ज--चुप-चुप

कोई नही जायेगा, तुम्हारे परिवार से।
कुन्ती माता बोली ऐसे, अदरूनी प्यार से.... ॥
और कोई नही मेरा बेटा भीम जायेगा।
कर पर उपकार पुर को बचायेगा॥
पर उपकारी नर होता सस्कार से.... ।१।
राक्षसो से भीम को तो कोई डर है नही।
एक मारा भी गया तो मुझे डर है नही॥
पाँचों से जो काम लेती, ले लुँगी मै चार से.... ।२।
अतिथि के पुत्र को तो जाने दूँगा मै नही।
उसे मारने का भारी पाप लूँगा मै नही॥
मुझे भी तो एक दिन जाना है ससार से ... ।३।
खाई नही मार कही, मार नही खायेगा।
मन्त्रसिद्ध मेरा बेटा उसे मार आयेगा॥
कितने ही राक्षसों को मारा तलवार से .. ।४।
एकचक्रा नगरी का भय टल जायेगा।
बक मारने का यश इसे मिल जायेगा॥
भोजन तैयार करो मेरे ही विचार से ।५।

मारने का पूछे कोई लेना मत नाम भी।
यश से न काम, हमे काम से है काम जी।।
मंत्रसिद्ध द्विज ने ही मारा मंत्रोच्चार से ।६।

तैयार हो गए :

दोहा

कुंती माँ के कथन पर, कर द्विज ने विश्वास।
स्वीकृति दे दी आपकी, माँ आई सुत पास।।
समझा दी सारी कथा, हुआ भीम तैयार।
माँ आवूँगा मै अभी, दुष्ट बकासुर मार।।

तर्ज—राधेश्याम

भोजन सामग्री से भरकर, गाडी चढ़कर भीम चला।
बक रक्षस के रहने का था, एक गुफा मे स्थान भला।।
नर ककाल अस्थियो के ही, लगे हुए थे ढेर वहाँ।
रुके वही पर भीम, समझने मे लग सकती देर कहाँ।।
सध्या होने वाली ही थी, भीम लगे खाना खाने।
राक्षस का भय, मरने का भय, बोलो कौन यहाँ माने।।

बक की चिन्ता :

दोहे

बक ने देखा आज का, है यह कैसा काम।
मुझ से डरने का नही, यह नर लेता नाम।।
भोजन करने के लिए, बैठा आसन मार।
नर कितना बलवान है, देखूँ इसे पुकार।।
डरे दुष्ट डरता नही, क्यों खाता यह माल।
माल जिसे तू मानता, माल नही यह काल।।
खा जाऊँगा मै तुझे, इसी माल के साथ।
मार रहा क्यो माल पर, अपने दोनो हाथ।।
सुना किया है अनसुना, वक को आया क्रोध।
क्रोध समय रहता नही, किसी बात का बोध।।
पडे भीम की पीठ पर, अब मुक्के दो चार।
किया भीम ने कुछ नही, इसके लिए विचार।।

बक ने सोचा आज तो, आया पुरुष विचित्र ।
बैठा कितनी शान्ति से, माल, मार, का मित्र ॥

लाया वृक्ष उखाड़ कर, दिया पीठ पर मार ।
उत्तर मे बक पर नही, कोई हुआ प्रहार ॥

अब भोजन सब कर चुके, बचा न दाना एक ।
उठे भीम अब जोर से, बक राक्षस को देख ॥

बक से बल से छीन कर, तरु का किया प्रहार ।
वक्षस्थल पर जोर से, दी दो मुट्ठी मार ॥

लातों घूसों से हुआ, अब दोनो में युद्ध ।
एक दूसरे पर बने, दोनो ही अति क्रुद्ध ॥

अट्टहास चीत्कार से, गूँज उठा आकाश ।
कौन छुड़ाने के लिए, आये इनके पास ॥

चटक पडी है हड्डियाँ, मुख से निकला रक्त ।
आँखे बाहर आ गईं, बक की मरते वक्त ॥

बक के परिवारी सभी, गये वहाँ से भाग ।
किसे नही होता यहाँ, जीवन से अनुराग ॥

बक मरने की सूचना, हुई शहर को प्राप्त ।
शहरवासियो का हुआ सकट आज समाप्त ॥

कथासार :

माँ ने, द्विज ने, सहजातो ने, सुना भीम से सारा हाल ।
परोपकारी पुरुषों का ही, होता जीवन, हृदय, विशाल ॥

"पुष्कर" काव्य सूत्र में सारी लडियाँ गई पिरोई जी ।
परोपकारी पुरुष यहाँ पर, होते कोई कोई जी ॥

दोहे

मास जेठ, मैसूर का, सुन्दर स्थान विशेष ।
दया धर्म का दे रहा, पुष्कर नित उपदेश ॥

स्वागत टाउनहाल मे, दो हजार चौतीस ।
रचना करने की मिली, प्रकृति से बकसीस ॥

आधार—महाभारत : आदिपर्व

13

भाई का भाई

अद्भुत नीति

तर्ज—कव्वाली

भारत की यह नीति रही है, भाई अपना भाई है ।
कभी-कभी भाई-भाई में होती क्या न लडाई है ।।
भाई कहाँ पीठ का मिलता,मिलता कचन गांठ का ।
भाई से बढ़कर क्या होती, मीठी यहाँ मिठाई है ।।१।।
भाई बड़ा पिता सम, छोटा भाई पुत्र समान भला ।
खून एक भाई-भाई का, एक सभी की माई है ।।२।।
काम पडे भाई के घर जब, भाई होता क्या न खडा ।
भाई का वह कैसा भाई, जिसने पीठ बताई है ।।३।।
साधर्मिक जन भाई-भाई, धर्म एक, गुरु एक जब ।
"मुनि पुष्कर" संघ की महिमा, जैनागम में गाई है ।।४।।

धृतराष्ट्र का प्रश्न :

तर्ज—हरिगीति

आ रहे हो द्विज ! कहाँ से, पाडवो के पास से ।
पूछता धृतराष्ट्र ऐसे, प्रेम से उल्लास से ।।
पाडवो का हाल कैसा, ठीक है द्विज ने कहा ।
है नही वे तो सुखी वनवास का दुख अति सहा ।।
हो गये दुर्बल बहुत वे, भोग दुख वनवास का ।
द्रौपदी मे अब रहा है, मात्र बल विश्वास का ।।

धृतराष्ट्र के विचार :

दोहे

बड़े दुःख की बात है, पाडव सहते कष्ट ।
इससे कुल कुरुराज का, हो जायेगा नष्ट ।।
कर सकता कोई नही, दुर्योधन को माफ ।
खा जायेगे अन्त में, इसको इसके पाप ।।
किया न सुत के मोह मे, मैने भी प्रतिकार ।
जगत क्या न धृतराष्ट्र को, दे सकता धिक्कार ।।
सुने शकुनि ने, कर्ण ने, ये सारे उद्‌गार ।
दुर्योधन करने लगा, मन मे दुःख अपार ।।

शकुनि के स्वर :

तर्ज—राधेश्याम

कहा शकुनि ने दुर्योधन से चिन्तित क्यों होते हो तुम ।
अपने किये हुए कार्यो पर, मन मे क्यो रोते हो तुम ।।
फहरा रही पताका यश की, फैल रहा है तेज प्रताप ।
सुनकर वृद्ध पिता की बाते, मन मे दुःखी बने क्यो आप ।।
अग्रमहिषियो को लेकर के, उठो द्वैतवन मे जाओ ।
देख विपिन्न दशा उनकी तुम, हर्ष शाति मन मे पाओ ।।
द्रुपद सुता की दुरवस्था से, प्रसन्नता मै पाऊँगा ।
लेकिन क्या उद्देश्य बनाकर, उन्हे देखने जाऊँगा ।।
कहा कर्ण ने गौएँ अपनी, अभी द्वैतवन मे आई ।
उनकी गणना करने का, उद्‌देश्य बना लेगे भाई ।।
सगम नामक गोपालक को, सिखला दी है सारी बात ।
आये तीनो प्रणमन करने कुरुराजा के पद मे प्रात ।।
गोपालक ने किया निवेदन, गायो का लेना व्योरा ।
दुर्योधन को भेज दीजिए, करे द्वैतवन का दौरा ।।

तर्ज–हरिगीति

द्वैतवन का नाम सुन धृतराष्ट्र चौके चित्त मे ।
पुत्र का जाना रहेगा, क्यो किसी के हित्त मे ।।

दोहे

गायो की गणना नही, कोई ऐसा कार्य ।
जिससे मेरे पुत्र का, जाना हो अनिवार्य ।।
जाये दुर्योधन अगर, तो क्या है आपत्ति ।
कहा शकुनि के साथ मे, होगी सब सम्पत्ति ।।
पाडव ठहरे है वहाँ, जहाँ जा रहे आप ।
जाने मे हित है नही, मन कहता यो साफ ।।
कहा कर्ण ने हम नहीं, जायेगे भी तत्र ।
घूम घुमाकर तुरत ही, आ जायेगे अत्र ।।
स्वीकृति दी धृतराष्ट्र ने, तीनों हुए प्रसन्न ।
मानो भूखे को मिला, अन्न नही परमान्न ।।

तर्ज–राधेश्याम

शकुनि, कर्ण, दु शासन, सेना, बडी, सचिव थे सारे साथ ।
साथ हजारो चली रानियाँ, भानुमती से करती बात ।।
हय हजार नव, आठ सहस रथ, मत्त मतगज तीस हजार ।
पैदल सेना गिनी न जाती, कहलाती वह बिना शुमार ।।
गायों बछडो को गिन-गिनकर, उन पर नये निशान किये ।
वन सतुष्ट काम से सब को, ऊँचे बहुत इनाम दिये ।।
दुर्योधन ने आज्ञा दी अब, क्रीडा भवन बनाने को ।
मन ललचाता रहता हरदम, मोज बहार मनाने को ।।
करने लगे तलाश लोग अब, देखा एक सुन्दर उद्यान ।
नन्दनवन सम मुन्दर सुन्दरतम, था वह क्रीड़ा का स्थान ।।

चित्रागद विद्याधर का था, सुन्दर वन साताकारी ।
चोकीदार किया करते थे, उस वन की पहरेदारी ।।
दुर्योधन के सेवक उसमें, करने पाये नही प्रवेश ।
अगर प्रवेश कही पर पाना, लाना लिखवा कर आदेश ।।
दुर्योधन के पास पहुँचकर, सुना दिया है सारा हाल ।
दुर्योधन का गुस्सा भड़का, हुई क्रोध से आँखे लाल ।।
तुम्हे रोकने वालों को तुम, पहुँचा दो यम के घर पर ।
तुम्हे पता है दुर्योधन के, तुम हो विश्वासी नौकर ।।
सेवक गये रक्षकों को अब, मार-पीट कर दिया भगा ।
वन रमणीय भवन पर झंडा, दुर्योधन का दिया लगा ।।

न्याय की पुकार :

दोहा

चित्रांगद आया तुरत, मन में भर कर जोश ।
न्यायी को रहता सदा, अपने पर सन्तोष ।।

तर्ज–प्यारे भारत में

बिना अनुमति क्यो, वन मे किया प्रवेश ।
पहरेदार को क्यो मारा, क्यो उद्यान उजाडा सारा ।
क्यो उपजाया क्लेश । बिना …१।
रहना है तो अनुमति लेते, हम अपनी चाबी दे देते ।
देते कुछ आदेश । बिना …२।
निकलो चलो यहाँ से जाओ, अपना यह सामान हटाओ ।
पढो शान्ति सन्देश । बिना …३।
सत्ता का दम क्यों भरते हो, असभ्यता कैसे करते हो ।
समय पड़ा है शेष । बिना …४।

अन्यायपूर्ण उत्तर :

तर्ज–कव्वाली

कौन आया वन-भवन खाली कराने के लिए,
बोलता कैसे वचन हमको डराने के लिए ।

हम हटेंगे अब नही, अधिकार हमने कर लिया ।
काम पर रह जाइये गौवे चराने के लिए·· ॥१॥
आप जैसे कायरो को, हम समझते कुछ नही ।
हम लडेगे आप से, केवल हराने के लिए··· ॥२॥
जाइये, गर शक्ति हो तो, आइये मैदान में ।
हाथ दो दिखलाइये, अपने घराने के लिए···· ॥३॥

बन्दी बन गये

तर्ज—राधेश्याम

हुआ परस्पर युद्ध, युद्ध मे दुर्योधन की हार हुई ।
सब को बन्दी बना लिया है, चिन्ता बिना शुमार हुई ॥

युधिष्ठिर के पास :

महारथी हथिनापुर से भी, समाचार सुनकर आये ।
भानुमती रानी से ऐसे, शब्द भीष्म ने फरमाये ॥
दुर्योधन को छुडवाने मे, वत्से ! हम है सब असमर्थ ।
धर्मराज ही बतलायेगे, तेरे इस रोने का अर्थ ॥

दोहे

भानुमती आई तुरत, धर्मराज के पास ।
मागी भीख सुहाग की, रोई बनी उदास ॥
धर्मराज पिघले बहुत, सुनकर कातर बोल ।
कभी धर्म कांटा नही, देता खोटा तोल ॥
द्रुपद सुता से भीम ने, बोले ऐसे बोल ।
भानुमती के सामने, देखो आखे खोल ॥
यह तेरे अपमान का, मिला उचित ही दंड ।
उतर गया सारा नशा, मन का मलिन घमंड ॥
भानुमती रोने लगी, बनकर बहुत अधीर ।
अश्रु नीर भी डालता, क्या न कलेजा चीर ॥

आश्वासन के बाद :

सुन वत्से ! तेरे प्रिय पति को, बन्धन मुक्त बना दूँगा ।
सत्य प्रतिज्ञा मै करता हूँ, कुल की लाज बचा लूँगा ।।
भानुमती आश्वस्त हो गई, हतप्रभ चारो भ्रात बने ।
दुर्योधन के लिए आज क्यो, इतने कोमल तात बने ।।
कुटिल कठोर शत्रु ये कौरव, अनुभव कर पाये जब हम ।
उनके लिए सरल बन जाते, अवसर आने पर अब हम ।।
सहायता हम करे न इनकी, दुःख पाये तो पाने दो ।
अश्रु बहाये भानुमती तो, थोडे और बहाने दो ।।
लाक्षागृह मे हमें जलाया, छीना छल के द्वारा राज्य ।
भरी सभा मे साड़ी खीची, दुर्योधन का दर्शन त्याज्य ।।
अर्जुन और भीम को सुनकर, भानुमती कापी थर-थर ।
धर्मराज ने शांत बनाया, नीति धर्म का देकर स्वर ।।

भाइयों के बीच :

तर्ज—चुप-चुप

मै भी मानता हूँ बात सत्य है तुम्हारी जी ।
तुलना न हो सकेगी उनकी हमारी जी····।।
नीचता के नाम से ही दूर से डरेगे हम ।
नीच के भी साथ कैसे नीचता करेगे हम ।
हमे तो हमेश रही उच्चता ही प्यारी जी·· ।।१।।
कीर्ति कुरुवश की बढेगी इस बात से ।
आप सभी अनजान है अभी इस बात से ।
मान लो यह तलवार है बड़ी दुधारी जी··· ।।२।।
शत्रुओ के लिए हम भाई सब एक है ।
कुरु कुल वाले नेक रखते विवेक है ।
इज्जत बाजार मे न मिलती उधारी जी ।।३।।
मन की विशालता से करिये विचार जी ।
कौरवो व पाडवों का एक परिवार जी ।
भाई के लिए ही भाई होता हितकारी जी·· ।।४।।

तर्ज–राधेश्याम

कौरव कुल को किया कलकित, पहले ही दुर्योधन ने ।
हम से क्या कुछ छिपा हुआ है, कहा भीम ने अर्जुन से ।।
क्या हम भी वैसा करने मे, अपना गौरव मानेगे ।
आशा है अब किसी बात पर, हठ न स्वय का तानेगे ।।
आये अवसर का अपने को लाभ नही अब लेना क्या ?
इनमे अपने में जो अन्तर, उसे न रहने देना क्या ?
विद्याधर के चगुल मे से, दुर्योधन को छुडवाओ ।
मेरा कहना मानो जाओ सभी साथ मे जुट जाओ ।।
गये भीम अर्जुन लडने को, चित्रागद से बोले स्पष्ट ।
इन्हे मुक्त कर दो ओ भैया ! करो न ले जाने का कष्ट ।।
धर्मराज का नाम श्रवन सुन, चित्रागद चल आया है ।
सबको मुक्त बनाया अपना, विनय विवेक बताया है ।।
दुर्योधन नीचा मुख करके, बैठा चले गये सारे ।
कहा युधिष्ठिर ने दुर्योधन, भाई-भाई हम प्यारे ।।

धर्म नीति :

हम है पाच ओर तुम सौ हो, घर पर तुम तुम, हम है हम ।
किन्तु दूसरे से लडने मे, सभी एक सौ पांच परम ।।
सभी सम्मिलित सभी एक है, सुख दु ख मे साथी भाई ।
भाई तो है ही हम चाहे, हम न्यायी तुम अन्यायी ।।
धर्मराज की धर्म नीति का, ऋणी आज सारा संसार ।
भला बना रहने का देखो, कितना ऊँचा एक प्रकार ।।
मुनि पुष्कर सतों के मन की, ऊँचाई का अन्त नही ।
बिना धर्म की ऊँचाई के होता कोई सत नही ।।
याद रहेगा क्या न सभी को, बेगलोर का वर्षावास ।
तप इकशत इकावन दिन का किया बहन ने धर उल्लास ।।
मासखमण तप चवालीस कुल, धूमधाम तप की भारी ।
दो हजार चौतीस साल की पुष्कर मुनि महिमा न्यारी ।।

—जैन महाभारत तथा वनपर्व

14

योग्यता बढ़ाइये

योग्यता का समय :

तर्ज–कव्वाली

योग्यता पाये बिना, पद ज्ञान मिल सकता नही, ।
युवावस्था के बिना, सौन्दर्य खिल सकता नही ।।
बीज उगता खेत में, पाकर समय की योग्यता ।
छीलने की योग्यता बिन काठ छिल सकता नही" ।।१।।
वस्तु जो जिसके लिए वह है उसी के काम की ।
तेल के कोल्हू मे गन्ना एक पिल सकता नही ।।२।।
क्यो किसी के साथ ईर्ष्या और मन मे द्वेष हो ।
भार हाथी का कभी खरगोश झिल सकता नही ।।३।।
योग्यता अपनी बढाकर, आप बढते जाइये ।
गिरि शिखर तूफान से भी इंच हिल सकता नही ।।४।।

परस्पर ईर्ष्या :

तर्ज–राधेश्याम

राजकुमार सभी पढ़ते थे, द्रोणाचार्य पढाते थे ।
सब को पीछे छोड़ अकेले, अर्जुन कोई न बढाते थे ।।
अर्जुन अपनी प्राप्त योग्यता द्वारा आगे बढता था ।
जितना वे पढ़ते थे उतना ज्ञान बराबर पढता था ।।
गुरुसुत अश्वत्थामा भी यो, पूज्य पिताजी से कहता ।
अर्जुन पर जो प्रेम न होता, तो यह क्यो आगे रहता ।।

पक्षपात गुरुजी करते है, कौरव यही कहा करते ।
अपने शिष्यो के ये ताने, गुरुजी नित्य सहा करते ।।
राधावेध कौन सीखेगा, करू॑ परीक्षा सारो की ।
वन में कभी शिकारो की क्या मन मे कभी विचारों की ।।

परीक्षा के लिए :

तर्ज–प्यारे भारत में

परीक्षा देने को, हो जाओ तैय्यार....।
बोले शिष्यो से गुरु ऐसे, बिना परीक्षा जाने कैसे ।।
कौन हो गया पार, परीक्षा० ।।१।।
जो विद्यार्थी रह जायेगा, राधावेध न वह पायेगा ।
इसका अन्तिम सार, परीक्षा० ।।२।।
धनुष बाण ले खडे हुए सब, मन ही मन से बडे हुए सब ।
था सब का अधिकार, परीक्षा० ।।४।।

कृत्रिम चिड़ियाँ :

तर्ज–राधेश्याम

लकड़ी की चिड़िया को दरखत, की डाली पर बिठलाया ।
इसका गला उडाया जाये गुरुजी ने अब फरमाया ।।
सबसे पहले उठे युधिष्ठिर, धनुष बाण कर मे लेकर ।
विद्यार्थी गौरव अनुभवते, क्या न परीक्षाएँ देकर ।।

गुरु के प्रश्न :

तर्ज–आजादी का दीवाना था

क्या चिडिया को देख रहे हो, सही बताना जी ।
हा, हा गुरुजी देख रहा हूँ, सही निशाना जी ।।
अपने सहपाठियो को, इस दरखत को, मुझको ।
किस किस को तुम देख रहे हो, सही बताना जी ।।१।।
धर्मपुत्र ने बड़े विनय से कहा गुरु से साफ ।
अजि ! मै सबको देख रहा हूँ, नही छुपानाजी ।।२।।

तर्ज–तरकारी ले लो मालन आई बीकानेर की

हट जाओ युधिष्ठिर ! काम नही है तुम्हारा ···।
हटे युधिष्ठिर एक एक को, पूछे प्रश्न उठाकर ॥
उत्तर वही मिले है आया, दुर्योधन का नंबर ॥हट···१॥

तर्ज–राधेश्याम

दुर्योधन उठ आया उससे, पूछे सारे वही सवाल ।
क्या कुछ देख रहे हो बोलो, करना फिर तुम वेध कमाल ॥
सब कुछ दीख रहा है मुझको, उससे उत्तर पाया स्पष्ट ।
वत्स ! गौर से देखो होता, नही देखने में कुछ कष्ट ॥

दोहे

गुरुजी ! मै अधा नही, सब कुछ सकता देख ।
इतना भी आया न क्या, मुझ में अभी विवेक ॥

गुरु ने आज्ञा की तुरत, किया बाण सधान ।
लक्ष्यवेध होता, अगर–होता सही निशान ॥

एक एक करके सभी, बैठे बने निराश ।
विना योग्यता के दिया, इतने दिन अभ्यास ॥

अर्जुन का उत्तर :

अर्जुन उठ करके आया है, धनुष-बाण है अपने साथ ।
गुरुजी ने जो सबसे पूछी, अर्जुन से वह पूछी बात ॥
क्या क्या देख रहे हो बोलो, गुरु को ? तरु को ? अपने को
शाखाओ को ? फल फूलों को ?, अपने मन के सपने को ?
सिवा एक चिडिया के कुछ भी, मेरे नजर नही आता
चिड़िया की भी केवल गर्दन, सही निशाना मन भाता
गुरु आज्ञा से तीर चलाया, सधा निशाना सही सही
एक चिन्न के विना क[illegible] सिद्धि मिलेगी नही कही

कथासार :

मन की एकाग्रता योग्यता, विनय विवेक बढाते है ।
गुरु अपने शिष्यो को कितने-सुन्दर पाठ पढ़ाते है ।।
जो न बढा पाते गुण, अवगुण बढ़ते उनके पढ़ने से ।
पढ़ने से क्या लाभ, लाभ है—सद्‌गुण शोभा बढने से ।।
पुष्कर एक योग्यता ही है, ज्ञान, स्थान. की शान महान ।
शिक्षा श्रेष्ठ महाभारत की, खोल दिया करती है कान ।।
के जी एफ. शहर मे सुन्दर स्वर्ण खदाने है भारी ।
पुष्कर मुनि है संघ यहां का, सन्तो को साताकारी ।।

आधार—जैन महाभारत

15

जीव-रक्षा की शिक्षा

शिक्षा का उद्देश्य :

तर्ज--कव्वाली

जीव रक्षा के लिए शिक्षा हमारी चाहिये।
जीवरक्षा के लिए दीक्षा हमारी चाहिए ॥
जीव रक्षा के लिये हो, प्राप्त जिससे प्रेरणा।
वृत्तियाँ इस चित्त की शुभ प्रेमधारी चाहिए ॥१॥
प्राण औरो के बचाओ, प्राण देकर आपके।
सभी जीवो को न क्या उमर हजारी चाहिए....॥२॥
मार करके एक को, गर्चे बचाया एक को।
दृष्टि समता की हमे कल्याणकारी चाहिए....॥३॥
मगर को मारा नही, गुरु को बचाने के लिए।
महाभारत की कथा सुख शाति कारी चाहिए ॥४॥

जल क्रीड़ा :

तर्ज--राधेश्याम

एक बार गुरु द्रोण शिष्य सब, यमुना मे क्रीडा करते।
नही तैरने पाते वे नर, जो जलधारा से डरते ॥
क्रीडा कीडा ही होती है, चाहे वह जल स्थल की हो।
चाहे हो वह क्यों न आज की, चाहे बीते कल की हो ॥

लज्जा, भय, सकोच भागते, क्रीडा करने वालो से ।
क्रीडा कब की जा सकती है घुट-घुट मरने वालो से ॥
मन की पीड़ा, तन की पीडा, क्रीड़ा से हो जाती दूर ।
पशु पक्षी सुर नर किन्नर भी, क्रीडा करते सभी जरूर ॥
क्रीड़ा करते समय द्रोण का, पाव मगर ने पकडा है ।
कसे छुडाने को लेकिन वह, पड़ा वड़ा ही तगड़ा है ॥

गुरु की पुकार:

तर्ज—कोरो काजलियो

पाव छुडाओ रे, यो वोले द्रोण पुकार.... ।
शिष्यों ! आ ओरे, दे मुझे नही यह मार.... ॥
ग्राह खीचता जा रहा, वल दिखला रहा अपार....॥१॥
आये सारे दौड़ते, मुख करते हाहाकार...॥२॥
जल मे जाकर जूझना, है प्राणो का संहार ॥३॥
शक्ति बड़ी जल जीव की, जल मे इसका परिवार....॥४॥
टांग टूट जाये कही, हम खीचे ? करे प्रहार...॥५॥
निश्चित कर पाये नही, क्या करना अव उपचार....॥६॥

तर्ज—राधेश्याम

इतने मे अर्जुन आया है, गुरु ने कहा—बचा जीवन ।
चढा धनुष पर बाण धनजय, तीर छोडने का कर मन ॥
गुरु बोले मेरे जीवन के लिए इसे मत मारोजी ।
मुझे उबारो और मगर को, मेरे साथ उबारोजी ॥
पशु है भूखा उदरपूर्ति हित पकडा इसने मेरा पैर ।
करो उपाय वही ओ अर्जुन ! जिसमे हो दोनो की खैर ॥
एक साथ मे पाँच बाण ले, बडी कुशलता से छोड़े ।
मुख खुल गया मगर का धीरे, द्रोण पाव लेकर दौड़े ॥

आहिस्ता से उन तीरो को, खीचा वापिस अर्जुन ने।
अर्जुन का गुन मान लिया है, दोनों के कोमल मनने ।।

कथासार :

गुरु बोले अस्त्रो शस्त्रो का रक्षण में उपयोग करो।
अपने रक्षण हित औरो के, प्राणो का न वियोग करो ।।

रण कौशल के साथ साथ गुण, धैर्य विवेक दया धारो।
सुनो कुमारो ! इस दुनिया के, किसी जीव को मत मारो ।।

पुष्कर मुनि इस दुनिया से भी हमें बहुत सा मिलता ज्ञान।
रक्षा की शिक्षा से होता, इहभव पर-भव में कल्यान ।।

दोहा

धर्म सघ बेल्लूर का, देखा भक्ति प्रधान।
दो हजार पैतीस का, साल श्रेष्ठ पहचान ।।

आधार—जैनमहाभारत

—०००००—

फिर भी आवश्यकताओ की पूर्त्ति नही हो पाती थी ।
पता नही बेचारी कैसे घर का भार उठाती थी ।।
खाती और खिलाती थी या भूखे पेट सुलाती थी ।
रुलती और रुलाती मनकी, गांठे अधिक घुलाती थी ।।

धन नहीं, ज्ञान

कामधेनु गैया पाने को, पहुँचे परशुराम के पास ।
बांट चुके सर्वस्व स्वय वे, करते तप का पूर्णाभ्यास ।।
बोले मात्र बची विद्याएँ, सीखो तो सिखलादू मैं ।
आये हुए आपको खाली हाथो क्यों लौटा दू मै ।।
सिखलाने वाले को कोई, मिले सीखने वाला नर ।
सिखलाने वाला न ढूँढता–फिरता कभी शिष्य का घर ।।
द्रोण प्रेम से लगे सीखने, विद्याएँ सब कर ली प्राप्त ।
शिक्षक अल्प समय मे सारा, करवा देता कोर्स समाप्त ।।

धन का काम :

तर्ज--कव्वाली

देखलो धन के बिना, धन का न होता कामजी ।
पेट विद्या से भरे तो, चाहिए क्यो दामजी ·· ।।
पेट रोटी मागता है, धन बिना रोटी नही ।
और रोटी के बिना, हो क्या सुबह से शामजी····।।१।।
खेलता था खेल बालक, बालको के साथ में ।
खेल करके धूप मे वे कर रहे विश्रामजी····।।२।।

बालस्वभाव

दोहा

बोले बालक बोल सब, बोलो अपनी बात ।
क्या खाकर आये यहाँ-खेल खेलने साथ ।।

तर्ज--राधेश्याम

कहा एक ने आज सवेरे, मक्खन रोटी खाई जी ।
कहा एक ने आज सवेरे, खाई दूध मलाई जी ।।

कहा एक ने लड्डू खाये—कहा एक ने खाई खीर ।
सच न मानते हो तो देखो-मेरा पेट दिखादूँ चीर ।।
कहा एक ने दूध पिया है, भरकर एक गिलास बड़ी ।
कहा एक ने लस्सी पी है, लगती मुझको प्यास बड़ी ।।
भोला अश्वत्थामा बोला, मैं आया हूँ खाली पेट ।
खाली पेट कहाँ तक खेलूं, खेलूँगा फिर थोड़ा बैठ ।।
व्यंग कसा बच्चों ने मिलकर, घर पर हो तो खायेजी ।
रोटी भी मुश्किल से मिलती, दूध कहाॅ से लायेजी ।।
रोने का सा मुँह लेकर के, अश्वत्थामा घर आया ।
दूध पिलाओ, दूध पिलाओ, जोर-जोर से चिल्लाया ।।
मां ने समझाया धीरे से, दूध कहाॅ से लाऊँ मैं ।
रोटी भी मुश्किल से बेटे, खाऊँ और खिलाऊँ मै ।।
आटा घोला, चीनी घोली, दूध पिलाया बेटे को ।
माॅ ही निपटाया करती है, सुत के, घर के, लैठेको ।।
देख दशा बालक की, घर की, हृदय द्रोण का रोया है ।
पढने और पढ़ाने मे ही समय व्यर्थ का खोया है ।।
नही पास मे पैसा कैसे, सुत को दूध पिलाऊँ मैं ।
जीऊं कैसे और पुत्र को, कैसे यहाॅ जिलाऊँ मै ।।

मित्र की याद :

दोहे

याद आ गया द्रोण को, अपना सच्चा मित्र ।
गले मिले थे जिस समय, द्रुपद नरेश पवित्र ।।
दूगा आधा राज्य मै—उस दिन दिया वचन्न ।
राज्य नही तो आज वह, देगा मुझको धन्न ।।
मेरा सच्चा मित्र है, देगा अति सम्मान ।
सोच द्रोण ने कर दिया, उसी ओर प्रस्थान ।।

16

हाय गरीबी

पैसे की प्रधानता :

तर्ज—कव्वाली

मित्र नही दुनिया मे कोई मित्र यहाँ पर पैसा है ।
जिसके पास नहीं है, पैसा मित्र बधु वह कैसा है ।।
पैसे ही पूजे जाते है, मिलता मित्र न मित्रो से ।
पैसे ही पूजे जाते है, यह्रा नियम ही ऐसा है ।।१।।
उदाहरण क्या दे दुनिया की हालत ही है वहुत खराव ।
कलियुग मे क्या सतयुग मे भी, देखा गया हमेशा है ।।२।।
आँख बदलना, वात वदलना, आता पैसे वालो को ।
सात पीढ़ियो से उनका तो, रहा यही वस पेशा है ।।३।।
मुनि पुष्कर महाभारत मे, चित्र द्रोण का देख चलो ।
वही सुनाया जाता, देखा पढा सुना जो जैसा है ।।४।।

द्रुपद और द्रोण :

तर्ज—राधेश्याम

अग्निवेश ऋषि के आश्रम मे, द्रुपद द्रोण पढते थे साथ ।
बहुत घनिष्ठ मित्र थे दोनो दोनो की क्या कहनी बात ।।
राजतेज से ब्रह्मतेज का मिलन यहाँ पर हो पाया ।
प्राण एक होते मित्रो के, अगल-अलग होती काया ।।
दोनो की मति बहुत तीव्र थी, दोनो थे पढने मे तेज ।
एक दूसरे मे न परस्पर, किसी बात का था परहेज ।।

कर अध्ययन पूर्ण अब दोनो, लगे लौटने अपने घर।
दोनो ही मित्रों की आंखे, और हृदय भी आया भर ॥

राज्य दूंगा :

बंधु द्रोण ! हम आज बिछुडते, अपना है सबंध अटूट।
जीव छूट सकता काया से, सकता स्नेह न अपना छूट ॥
जब मै राजा होऊँगा तब, आधा राज्य तुम्हें दूंगा।
सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ मै कभी न कह कर बदलूंगा ॥
कहा द्रोण ने मित्र ! समय पर परखे जाते मित्र सदा।
करो प्रार्थना यही हमारा, नाता रहे पवित्र सदा ॥
मिले गले से गला मिलाकर, निकले आँसू नैनों से।
प्रेमी प्रेम दशा में विह्वल, बोल न पाते वैनो से ॥

अपने अपने घर :

दोहे

अपने अपने घर गए, पाये सुख सम्मान।
चाहे जैसा क्यो न हो, नर निर्धन धनवान ॥
वृद्ध पिता ने द्रुपद को, दिया राज्य का भार।
भार बिना सोपे कहो, क्या चलता संसार ॥

तर्ज–राधेश्याम

घर पर आया देख द्रोण को, भारद्वाज बहुत फूले।
रोग, बुढापा, निर्धनता को, एक साथ मन से भूले ॥
शरद्वान की सुता कृपी के, साथ द्रोण का किया विवाह।
पत्नीव्रत पतिव्रत को कोई-धर्म मानता नही गुनाह ॥
कृपाचार्य था इनका साला, जिसका नाम प्रसिद्ध यहाँ।
प्रत्यय विना आज तक कोई, हुआ रूप भी सिद्ध कहाँ ॥

निर्धनता की रेखा :

एक आप, सुत एक आपका, एक पुत्र की माताजी।
प्रश्न यहाँ परिवार-नियोजन का कैसे उठ पाताजी ॥

द्रुपद द्वार पर पहुँच कर, खड़े हो गये आप ।
मक्सद आने का कहा, द्वारपाल से साफ ।।

द्वारपाल ने सूचना, भेजी नृप के पास ।
आया मिलने के लिए, मित्र आपका खास ।।

द्रोण का मन

तर्ज—चुपचाप

सोचता है द्रोण अभी मित्र लेने आयेगा ।
बाहुओ मे भर लेगा, गले से लगायेगा·· ।।

बहुत दिन हो गए है मित्र से मिले हुए ।
देखूँगा मे नयन-मुख कमल खिले हुये ।।
मेरा प्यारा मित्र आया, सभी को सुनायेगा ·· ।।१।।

मुझे नही भूला होगा, राजा होने पर भी ।
पक्का रग नही जाता वस्त्र धोने पर भी ।।
रग - ढग - व्यग वही अपना दिखायेगा· ।।२।।

पहनेगा न जूते, वस्त्र बदलेगा भी नही ।
सचिवो को काम का आदेश देगा भी नही ।।
आओ, आओ, आओ की आवाज दे बिठायेगा····।।३।।

बिल्कुल विपरीत

दोहे

द्वारपाल ने आ कहा, चलिए अन्दर आप ।
बुला रहे है आपको, द्रपुद अखड प्रताप ।।

नृप पर सारे देश का, होता भारी भार ।
इसीलिए बुलवा रहा, मुझे द्रुपद धर प्यार ।।

आया अन्दर द्रोण पर, उठा नही नर-नाथ ।
स्वागत की सम्मान की, दिखी न कोई बात ।।

तर्ज–राधेश्याम

कौन ? कहाँ से हुआ आगमन ? क्या इच्छा है ? बतलाओ ।
बहुत गरीब विप्र लगते हो, कहने से मत सकुचाओ ॥
मित्र आपका द्रोण, मित्र से मिलने का मन कर आया ।
मित्र ! नही पहचान सका मैं, इचरज मन मे भर आया ॥
अग्निवेश ऋषि के आश्रम मे, दोनों ने शिक्षण पाया ।
बहुत मित्रता थी अपने मे, क्या न याद अब भी आया ॥
अच्छा होगा, आगे बोलो, रुक क्यों गये यहाँ पर ही ।
आधा राज्य तुम्हे दूँगा यो बोले आप वहाँ पर ही ॥

बात बदल दी ·

तर्ज–चुपचुप

आधा राज्य लेने के लिए क्या आप आये हो ?
कैसी झूठी चाल चली बड़ा पाप लाये हो· ।
मित्र कौन से है आप ? कौन सा दिया वचन ।
ऐसा झूठ ऐसी चाल, हो सकेगी कब सहन ॥
धूर्त्त हो मक्कार बड़े, मित्र बन पाये हो· · ॥१॥
आधा राज्य पाने की क्यो लालसा जगाई है ।
ब्रह्मपुत्र हो के भी यह रची क्यो ठगाई है ।
द्रोण बोला–द्रुपद ! क्या भांग गाजा खाये हो···॥२॥
अपना वचन कैसे याद नही आता है ।
देने की न इच्छा सारी बात को छुपाता है ।
निर्धन मित्र जान मन शरमाये हो···॥३॥

द्रोण की प्रतिज्ञा

तर्ज–राधेश्याम

धक्के मार निकालो, नृप अब बोला पहरेदारो से ।
आशा मुझे यही थी सुनले, तेरे जैसे यारो से ॥

अपने आप चला जाऊँगा, मै क्यों धक्के खाऊँगा ।
मित्रद्रोह का बदला लूँगा, ब्राह्मतेज दिखलाऊँगा ।।
गर्वोन्नत यह मस्तक तेरा, पाँवो बीच झुकाऊँगा ।
किए हुए अपमानों का फल, हाथो हाथ चखाऊँगा ।।
देख द्रोण की सत्य प्रतिज्ञा, द्रुपद बना भयभीत विशेष ।
जगता नही विवेक, अहँ का-जब होता मन पर आवेश ।।

द्रोण की चिन्ता :

दोहे

दुख गरीबी का प्रथम, और हुआ अपमान ।
दुखी दुसरा कौन है, देखो द्रोण समान ।।
मित्र-द्रोह का भी मुझे, लेना है प्रतिशोध ।।
तीनो आते याद तब, बहुत उफनता क्रोध ।।
समय, भाग्य, दे साथ जब, रास्ता आता हाथ ।
मानव के वश की नही, छोटी सी भी बात ।।

भाग्य का उदय :

तर्ज—राधेश्याम

खेल गेद का खेल रहे थे, कौरव-पाडव राजकुमार ।
गेद कुएँ मे गिरी किनारे, देख रहे थे आखिर द्वार ।।
द्रोण उधर से निकले बोले, गेद निकाल दिखाऊँ मै ।
वाण बाण से बीध गेद को, अपने पास बुलाऊँ मैं ।।
वाण बाण से बीध वाण से खीच गेद को लिया निकाल ।
राजकुमार प्रभावित होकर, बोले विद्या बड़ी कमाल ।।
परिचय लिया, बुलाया, आये, द्रोण भीष्म के पास चले ।
भाग्य साथ देता हो तब ही, सीधा सा रास्ता निकले ।।

द्रोण से द्रोणाचार्य :

भीष्म पितामह गुणवानो का, करते थे आदर सम्मान ।
अस्त्र-शस्त्र विद्याओं के थे, द्रोण बहुत भारी विद्वान ।।

द्रोण बने आचार्य यहाँ पर, पढते सारे राजकुमार।
सभी कलाओं में पारंगत, हुए शिष्य सारे तैयार ॥

गुरु दक्षिणा लो :

दोहा

गुरुजी ! दे गुरु दक्षिणा, जो भी हो आदेश।
बिना दक्षिणा शिष्य पर, रहता भार हमेश ॥
गुरु बोले तुम हो गए, सारे पूर्ण समर्थ।
दोगे ? जो मागूँ वही, वचन न जाये व्यर्थ ॥
जो देना गुरु-दक्षिणा, करना मुझे प्रसन्न।
बाँध लाइये द्रुपद को, करो कार्य सम्पन्न ॥
उसका क्या अपराध ? जो, उसको लाये बाँध।
धर्मराज के प्रश्न का, चढा चमकता चाँद ॥
मित्र-द्रोह उसने किया, किया वचन का भंग।
उसे दिखाना है मुझे, ब्रह्मतेज का रंग ॥
क्षमा करो, गुरुदेव ! हो, उससे आप महान।
कहाँ द्रुपद का स्थान है, कहाँ आप का स्थान ॥
गुरु बोले—गुरुदक्षिणा, मुझे यही स्वीकार।
दे न सको तो दो नही, मानो अपनी हार ॥
अर्जुन बोला—आपकी, आज्ञा होगी मान्य।
विनयी शिष्यो के लिए, आज्ञा का प्राधान्य ॥
नृपति द्रुपद को बाधकर, दे गुरु सम्मुख डाल।
दुर्योधन बोला तुरत, धनुष बाण संभाल ॥

द्रुपद हार गया

तर्ज—प्यारे भारत में

आये लड़ने को, चढ़कर राजकुमार।
सेना बड़ी साथ मे लाये, ताकत बडी बात मे लाये ॥

करते थे हुंकार···॥ आये-१ ॥
लड़ने लगा द्रुपद बलधारी, सेना लगी भागने सारी ।
डाल दिए हथियार···॥ आये-२ ॥
हारा द्रुपद बना है बन्दी, बोले द्रोण बड़े प्रतिद्वद्वी ॥
मन में खाया खार··॥ आये-३ ॥

पहचान लिया :

तर्ज—राधेश्याम

बोले द्रोण द्रुपद से मै हूँ, मित्र गरीब तुम्हारा जी ।
याद आ गया होगा आश्रम-वाला जीवन प्यारा जी ॥

नाम याद क्या आया मेरा, दिया वचन क्या आया याद ।
बन्दी बनकर चखो प्रेम से, मित्र-द्रोह का मधुरास्वाद ॥

भाग उत्तरी देते हो या भाग दक्षिणी देते हो ।
आधा राज्य शेष जो रहता, वही प्रेम से लेते हो ? ॥

बोला द्रुपद पूछना क्या है ? जो इच्छा हो वह ले लो ।
मै तो बन्दी बना हुआ हूं, चाहे प्राणो से खेलो ॥

द्रोण की उदारता :

चाहूं तो मै तुम्हे राज्य से, वचित भी कर सकता हूँ ।
लेकिन बाल मित्र से ऐसे करता, बहुत हिचकता हूँ ॥

भाग दक्षिणी मेरा होगा, भाग उत्तरी तेरा है ।
द्रोण द्रोण के इन शिष्यो का, अंतिम यही निवेरा है ॥

द्रुपद जानता भाग दक्षिणी, बहुत समृद्ध बहुत सम्पन्न ।
वेचारे का नही सहारा, द्रोणादेश हुआ प्रतिपन्न ॥

वन्धन खुलवा दिए द्रुपद के, लज्जित बनकर चला गया ।
मित्र-द्रोह करने का सीखा, द्रुपदराज ने पाठ नया ।

कथासार ·

मित्र मित्र जो होता तो क्यो, द्रुपद द्रोण को ठुकराता ।
द्रुपद द्रोण को अपनाता तो, भाग दक्षिणी क्यों जाता ।।
पुष्कर ग्रन्थ महाभारत की, शिक्षाये अपनाओगे ।
मिलने आए हुए मित्र का, क्या सम्मान बढाओगे ।।
धन दे, तन दे, आश्वासन दे, और वचन दे देने का ।
मित्र बनाए रखने को फिर, नाम नही ले लेने का ।।

दोहे

साहुकार शुभ पेठ है, शहर भला मद्रास ।
दो हजार पैंतीस का, सुन्दर वर्षावास ।।
प्रवचन प्रतिदिन हो रहे, तप जप का अभ्यास ।
युवको का भी धर्म मे बहुत बड़ा विश्वास ।।

आधार : वैदिक महाभारत



17

द्रौपदी की क्षमा

कठिन कार्य :

तर्ज–प्यारे भारत में

क्षमा कर देना जी, बहुत कठिन है काम।
सरल है लेना जी, क्षमा धर्म का नाम ।।
क्षमा बड़े ही कर सकते है, हृदय क्षमा से भर सकते है।
ले अन्तिम विश्राम ।।क्षमा-१।।
हिसा का प्रतिकार न हिसा, हिसा का प्रतिकार अहिसा।
प्रेम शाति सुख धाम ।।क्षमा-२।।
हिंसक को क्यो मारा जाये, उसका हृदय सुधारा जाये।
सुना सत्य पैगाम ।।क्षमा-३।।
आग आग से नही बुझाओ, जल बनने का मार्ग सुझाओ।
पाओ सुख आराम ।।क्षमा-४।।
माँ की ममता बाहर आई, क्षमा द्रौपदी ने दिखलाई।
बक्सा गुनह तमाम ।।क्षमा-५।।

मार गया :

तर्ज–राधेश्याम

सोये हुए शिविर मे सारे अधकार भी छाया है।
शस्त्रास्त्रो से सज्जित होकर, अश्वत्थामा आया है।।
द्रुपद-सुता के पाचो पुत्रो और इन्ही के मामा को।
बिना जगाए मार गया, क्या सूझा अश्वत्थामा को ।।

द्रोपदी का रुदन :

तर्ज–हरिगीति

द्रौपदी रोने लगी है, देख पुत्रों को मरे।
एक रोने के सिवा मां जो करे तो क्या करे।।१।
करुण क्रन्दन सुन सभी पांडव वहां पर आ गये।
रुक गए आसू झरे तो नैन से कैसे झरे।।२।।
देखते चुपचाप सारे बोलते कुछ भी नही।
द्रौपदी बोली युधिष्ठिर ! आप धर्मी हो खरे।।३।।
चीर खीचा लात मारी, देखते तब भी रहे।
द्रौपदी की दुर्दशा से आपका मन क्यो डरे।।४।।
कृष्ण बोले द्रौपदी से, शात रहिए शात अब।
जो हुआ सो हो गया, होनी किसी की कब टरे।।५।।
शात रहने के लिए उपदेश देना है सरल।
कठिन होता काम, बादल सकटो के जब घिरे।।६।।
मां बनो पहले किसी की, दो मुझे उपदेश फिर।
आप उठते ही करोगे, राम-राम हरे-हरे।।७।।

भीम की ओर :

दोहे

बोल सके कोई न कुछ, दुःख का नही शुमार।
हृदय सिधु मे शोक का, उमड़ पड़ा है ज्वार।।
कहा भीम से आप हो, बहुत बड़े बलवान।
इन चारो मे है नही, सूझ-बूझ, बल, प्रान।।
द्रोण पुत्र को मार कर, शात करे दिल आग।
तो मै समझूंगी मिला, पति से मुझे सुहाग।।
भीमसेन सुन कर चले, दिखलाते बल जोश।
पति क्या ? दे पाये न जो, पत्नी को संतोष।।

लिया नकुल को सारथि, चला भीम तत्काल।
पहचाना जाता नही, जाता मानो काल ।।

कृष्ण की चिन्ता :

तर्ज–राधेश्याम

कहा कृष्ण ने धर्मराज से, सोचो जरा विचारो आप।
वह ब्रह्मास्त्र चला देगा तो काम भीम का होगा साफ ।।
पार्थ, युधिष्ठिर, कृष्ण, गरुडध्वज-रथ पर चढ़कर चले तुरन्त।
सह्य विलब नही होता जब, विकट परिस्थिति हो अत्यन्त ।।

दोहे

है अर्जुन के पास भी, वह का वह ब्रह्मास्त्र।
कौन काम लेता नही, पास रखे शस्त्रास्त्र ।।
गुरु सुत ने ब्रह्मास्त्र का, किया प्रयोग प्रहार।
"पृथ्वी मंडल हीन हो", ऐसा मन मे धार ।।
पड़ा छोडना पार्थ को, बदले मे ब्रह्मास्त्र।
रक्षा करने के लिए, होते भी शस्त्रास्त्र ।।
गुरु सुत के ब्रह्मास्त्र का, रोके दुष्ट प्रभाव।
रक्षा पृथ्वी की करे, मेरा शस्त्र-स्वभाव ।।
गुरु सुत के ब्रह्मास्त्र की, शक्ति हुई अवरुद्ध।
अर्जुन के ब्रह्मास्त्र का, ध्येय विशेप विशुद्ध ।।

अहिसा की विजय :

तर्ज–राधेश्याम

हिंसा हार गई बेचारी, विजय अहिसा ने पाई।
अश्वत्थामा लगा भागने, मरने की नौबत आई ।।
रथ से कूदे भीम दौड कर पकडा अश्वत्थामा को।
इसने पाचो बेटे मारे, मारा उनके मामा को ।।
बांध दिए है हाथ पैर अब, रथ मे डाल लिया है साथ।
द्रुपदनन्दिनी के सम्मुख ला, बोले भीम पटककर हाथ ।।

लो यह असि प्राणांत दड दे, हृदय शांत कर लो अपना ।
सत्य नही साबित होता है, सारी दुनिया का सपना ।।
आंखे अंगारे बरसाती प्रज्वलती बदले की आग ।
बधे हुए गुरु सुत के देखो, सारे गए देवता भाग ।।
दैन्य निराशा, निरीहता ने, मुख पर स्थान बनाया है ।
मानो बचने की आशा से अपना इष्ट मनाया है ।।

द्रौपदी का मोड़ :

तर्ज—ख्याल की

हिसा का बदला, हिसा से लेना उचित नही मुझे…।
हिसा से हिसा बढ़ती है, वैर वैर से बढ़ता ।
पाठ अहिसा और क्षमा का, क्षमाशील नर पढता जी….।।१।।
मरे हुए ये मेरे बेटे, जीवित हो न सकेगे ।
मा का मुखडा मा का दुखड़ा, ये तो धो न सकेगे जी… ।।२।।
जैसे मै रोती हूँ वैसे, इसकी मा रोयेगी ।
अपनी मा के सभी लाडले, वह कैसे सोयेगी जी….।।३।।
टुकड़े टुकड़े हो जायेगा, मन इसकी जननी का ।
करदूँ इसे क्षमा मै अब तो, फल इसकी करनी का जी .।।४।।

इसे छोड़ दो

तर्ज—दूर कोई गाये

इसे छोड़ दीजिए, मन मोड़ लीजिए ।
गुरु सुत प्यारा है, शत्रु न हमारा है ।।
चिन्तन मनन है, शात मेरा मन है ।
जीवन सुधारा है ।।शत्रु० १।।
अभय का दान दो, धर्म को सम्मान दो ।
सुना जो विचारा है ·।।शत्रु० २।।
मार के करूँगी क्या, मै नही मरूँगी क्या ?
आंसुओ की धारा है· ·।।शत्रु० ३।।

धन्य हो धन्य :

तर्ज—राधेश्याम

सुनकर चकित हो गए सारे धन्य-धन्य मुख से बोले ।
गुरुसुत बंधा पड़ा था उसके, हाथ पांव हँसकर खोले ।।
क्षमादान से बढ़कर कोई धर्म नही है दान नही ।
धर्म न वह हो सकता जिसमें, क्षमादान को स्थान नही ।।

कथासार :

पुष्कर मुनि सारे शास्त्रों का क्षमादान मे है विश्वास ।
क्षमा धर्म की शिक्षा पाने, आये आप हमारे पास ।।
अपराधी के अपराधो को, याद रखो मत, जाओ भूल ।
क्षमा प्रेम सुख-शांति धर्म के लिए यही रास्ता अनुकूल ।।
दो हजार पैंतीस साल का, मास भला सुखकारी पोष ।
पुष्कर मुनि की ये रचनायें, उपजायेगी सुख सन्तोष ।।

आधार :—वैदिक महाभारत



18

अद्भुत दान

दान की महिमा :

तर्ज—प्यारे भारत में

मरता मरता भी, दानी देता दान।
मरता मरता भी, ज्ञानी देता ज्ञान···॥
किसके लिए ? किसे ? क्या देना कितना देना कब-कब देना ?
प्रश्न न लेते स्थान, मरता ॥१॥
आया अतिथि न खाली जाये, लाया इच्छा, तो ले जाये।
भज पाये भगवान, मरता· ॥२॥
देकर मन अभिमान न लाये, देकर मुख से गीत न गाये।
दानी वही महान, मरता·· ॥३॥
नियम दान का कभी न तोडे, जब तक अपनी देह न छोड़े।
हो इतना गुणवान, मरता· ॥४॥
गाते कृष्ण कर्ण-गुण-गाथा, सुना महाभारत मे जाता।
सुन लो देकर ध्यान, मरता ॥५॥

अर्जुन का अहं :

तर्ज—राधेश्याम

मिली कृष्ण की उचित प्रेरणा, अर्जुन ने मारा है बाण।
घायल होकर गिरा कर्ण पर, अभी नही निकले है प्राण ॥
अर्जुन को अभिमान आ गया, फूल रहा है मन ही मन।
आये हुए अह का कैसे नही प्रदर्शन करे वचन ॥
सुनो जनार्दन ! आप कर्ण की, बहुत प्रशसा करते हो।
मेरा भक्त, बड़ा है दानी, सबके सम्मुख स्मरते हो ॥

उसे आपने मना किया पर, दुर्योधन का साथ दिया।
मैने उसको एक वाण से, मृत्यु सेज पर सुला दिया ॥

परीक्षा करें :

उसको तुम न जानते अर्जुन !, दानवीर है कर्ण वड़ा।
चलो परीक्षा कर ले उसकी, वह मरने के लिए पड़ा ॥

तर्ज—हरिगीति

वेश ब्राह्मण का बनाकर, आ गए रणक्षेत्र मे।
चमकते श्री कृष्ण अर्जुन स्पष्ट द्विज के नेत्र मे ॥
कर्ण आँखे बन्द करके सांस अन्तिम गिन रहा।
थिरकती थी चांदनी शिशु बोलते यह दिन रहा ॥
व्यर्थ ही आना हुआ यो द्विज पुकारे जोर से।
सोचता सुन, कर्ण आये शव्द ये किस ओर से ॥
कर्ण आखे खोल बोला, आइये द्विज आइये।
क्या करू सेवा वताओ, आपको जो चाहिये ॥
नाम सुनकर आपका, हम दूर से आये यहाँ।
किन्तु हमको दान मिलने की रही आशा कहाँ ? ॥
आज तक याचक नही खाली गया है द्वार से।
आपको कुछ दे सकूँ तो मर सकूँगा प्यार से ॥
माग सकते कुछ न हम, जव है न कुछ भी पास मे।
सास भी अटका पडा है, दान के विश्वास मे ॥
कुछ नही आया नजर अब कर्ण किस का दान दे।
दान देने के लिए भगवान कुछ सामान दे ॥
दांत सोने के बने दो याद उनकी आ गई।
काम के अब है नही वे युक्ति सूझी है नई ॥
आइये, द्विज लीजिए, ये दात मेरे तोड़कर।
जाइये खाली नही घर दान वाला छोड़कर ॥

हम कसाई हैं नही जो दात तोड़े आपके ।
दान लेने के लिए भागी बने क्या पाप के ।।
आप जो तोडे नही तो दीजिए पत्थर उठा ।
तोड दूँगा मै स्वयं ही, धैर्य साहस बल जुटा ।।
हम करे सेवा तुम्हारी और पाये दान हम ।
दान वह होता न जिसमें, दानियो का हो न श्रम ।।
कर्ण ने खुद ही खिसक कर, ले लिया पत्थर पड़ा ।
खिसकने में हो रहा था, कष्ट मरने से बड़ा ।।
मार पत्थर दात तोड़े स्वच्छ कर लेने लगा ।
लीजिए, हे विप्र ! प्रभु का, नाम मुख लेने लगा ।।

वाह-वाह .

तर्ज--राधेश्याम

अर्जुन और जनार्दन दोनो, मूल रूप धर हुए खड़े ।
बोले कर्ण परखते थे हम, दानी हो तुम बहुत बडे ।।
अर्जुन का अभिमान गला है, देख कर्ण का दान महान ।
मैं न समझता था इतने दिन, जो कहते थे श्री भगवान ।।
मुनि पुष्कर यो दान की महिमा, गाया करते लोग सभी ।
सिवा कर्ण के नही किसी ने ऐसा किया प्रयोग कभी ।।
दो हजार पैंतीस शीत ऋतु तिरुपति बालाजी आये ।
नव संगीत सुनाये गाये, गये बनाये मन भाये ।।

आधार : वैदिक महाभारत

19

अर्जुन का आदर्श

पर कष्ट निवारण

तर्ज—कव्वाली

टालता दुख और का इन्सान वह इन्सान है।
पालता कर्त्तव्य जो, इन्सान वह इन्सान है....॥
कष्ट औरों का मिटाने, कष्ट जो लेता उठा।
बोलते इन्सान वह इन्सान क्या भगवान है...॥१॥
धर्म-पालन मे न जो करता बहानेबाजियाँ।
धर्म का आदर्श ही माता-पिता संतान है...॥२॥
तोड़ना हो जो नियम तो, क्यो करे स्वीकार भी।
तोडने में है नही, व्रत-पालने मे शान है...॥३॥

गौरक्षा

दोहे

राजमहल के द्वार पर, बोले आ गोपाल।
गौवो की रक्षा करो, अर्जुन ! दीन दयाल॥

अर्जुन की निद्रा उड़ी, सुनकर करुण पुकार।
गौवों का क्या हो गया, पूछ रहा धर प्यार॥
चोर चुरा भागे उन्हें, हमे मारते बाण।
गौवे ही धन राष्ट्र का, और हमारे प्राण॥
असमंजस में पड़ गया, अर्जुन सुनकर बात।
कैसे गो-रक्षा करे, शस्त्र नही जब हाथ॥

तर्ज--हरिगीति

द्रोपदी जिस महल में है, शस्त्र है उस महल में ।
है युधिष्ठिर महल मे, मै जान पाऊँ महल में ।।
महल में जाऊ अगर मै, तो नियम हो भग जी ।
इस समय जाना महल में, है न उत्तम ढग जी ।।
वर्ष बारह का मुझे, वनवास मिलता दंड मे ।
चोर गौवों को चुराकर, ले गए वनखंड में ।।
व्यक्तिगत सुख है इधर, कर्त्तव्य नृप का है इधर ।
सोचना इतना यहा अब, चाहिए जाना किधर ।।

अर्जुन का विवेक :

तर्ज--राधेश्याम

अन्त.पुर में गए शस्त्र ले, लौटे उलटे पाव तुरत ।
कौन कहा पर क्या करता है, सोचा,झाँका,लिया न अंत ।।
द्रुपदनन्दिनी खडी हो गई, धर्मराज भी उठ बैठे ।
आते जाते अर्जुन को वे, क्या देखे लेटे-लेटे ।।
क्यो आया ? क्या हुआ ? न पूछा, बतला पाया भेद नही ।
बहुत शीघ्रता मे कोई भी, पढने पाता वेद नही ।।

चोर भाग गये .

अस्त्र-शस्त्र लेकर के अर्जुन, गोपालो के साथ चले ।
गौवो का था झुंड,चोर वे-बहुत दूर कैसे निकले ।।
झुड दिखाई दिया देर से, अर्जुन ने ललकारा है ।
उलटे पावो चोर भगे सब, नही किसी को मारा है ।।
गोपालो ने गौवे पाई, अर्जुन गया नही घर-पर ।
डटा हुआ कर्त्तव्य भाव पर, बैठ गया पुर के बाहर ।।
जाना है वन मे मुझको तो, मैंने किया नियम का भंग ।
गुरुजन सभी यहां पर आकर, दे आशीष देख कर ढग ।।

अर्जुन को अनुमति :

गए युधिष्ठिर आदि सभी सुन, समझाते है अर्जुन को ।
यह आपत्ति काल है भाई, शांत करो अपने मनको ।।
क्या आपत्ति विपत्ति बताओ, धर्म पालने जाने दो ।
नियम और आदर्श हमारा, दुनिया को समझाने दो ।।
कुन्ती द्रुपदनन्दिनी ने भी, समझाया कुछ डाला जोर ।
परिजन का हठ प्रेम देखकर, अर्जुन पडे नही कमजोर ।।
अर्जुन अनुमति लेकर वन मे, बारह वर्ष बिता आया ।
नियम भंग का दड भोग कर,निज कर्त्तव्य निभा पाया ।।

कथासार :

पुष्कर नियम-धर्म के प्रति हम, बफादार रहना सीखे ।
नियम पालकर, नियम पालने-का कुछ-कुछ कहना सीखे ।।
पढो महाभारत मे मिलते, ऊचे ऊंचे ये आदर्श ।
आदर्शो के लिए कीजिए, गगन-धरातल से सघर्ष ।।
आध्रप्रदेश प्रवरपुर कडपा, रतनचन्द राका का घर ।
श्रद्धा भक्ति बड़ी रखता है, धर्मसंघ मुनि पुष्कर पर ।।

आधार—जैन महाभारत



20
धर्म की अडिगता

डिगो नहीं :

तर्ज–प्यारे भारत में

धर्म पर अडिग रहो, यही धर्म का सार....।
उर्वशियो से करना क्या है, उर्वशियों से डरना क्या है ।।
मरना है इकवार....।।धर्म-१।।
कोई कितना ही ललचाये, हुक्म इन्द्र का भी ले आये ।
करो नही स्वीकार.. ।धर्म-२।।
अपना मन हो अपने वश में, अपना तन हो अपने वश में ।
इससे वेडा पार.. ।धर्म-३।।
प्यार धर्म से करना सीखो, धर्म कर्म पर मरना सीखो ।
सीखो एक प्रकार. ।।धर्म ४।।
मिलते वहुत डिगाने वाले, मिलते बहुत चिगाने वाले ।
मायावी संसार...।।धर्म-५।।

इन्द्र-भवन में :

तर्ज–राधेश्याम

अर्जुन इन्द्र भवन में रहकर, अस्त्रो का करते अभ्यास ।
पूर्णाभ्यास विना विद्यार्थी, कैसे हो सकता है पास ।।
नृत्य गान में निपुण होगए, रुके इन्द्र के कहने से ।
रुकना ही पड़ता है, पाया, लाभ यही पर रहने से ।।

उर्वशी का नाच :

इन्द्र सभा मे नृत्य एक दिन, किया उर्वशी ने भारी।
निर्निमेष अर्जुन ने देखी, नृत्यकला कितनी प्यारी ।।
देख रहा है इन्द्र उर्वशी, पर है आंखे अर्जुन की।
आंखो द्वारा जानी जाती, स्थितियाँ मानव के मनकी ।।
कई वार देखा पर पाया, सुरपति ने वह का वह हाल।
उलटा अर्थ लगा वैठा मन, सव के होते अलग खयाल ।।
नाच समाप्त हो गया, सारे चले गए है अपने स्थान।
बुला लिया गंधर्वराज को, और दिया आदेश महान ।।
कहो उर्वशी से वह जाए, अर्जुन का मन करे प्रसन्न।
चित्र प्रसन्न बनाने वाली, कला नही उससे प्रच्छन्न ।।

उर्वशी और अर्जुन

दोहे

मिला उर्वशी को तुरत, सुरपति का आदेश।
जैसा थी मै चाहती, वैसा हुआ विशेष ।।
सुरपति की अनुमति बिना, कर न सकी यह कार्य।
देवलोक मे इन्द्र की, आज्ञा मस्तक धार्य ।।
आप जाइये, आपका--हो जायेगा काम।
काम देखकर दीजिए, दाम--इनाम--सुनाम ।।
खड़ी हुई आ उर्वशी, अब अर्जुन के पास।
उनके आने से अधिक, फैला दिव्य प्रकाश ।।
अर्जुन ने स्वागत किया, नमस्कार के साथ।
क्या सेवा ? क्या प्रिय करूँ ?, पूछ रहा है बात ।।
सेवा करने के लिए, मै आई हूँ आज।
अनुचित है यह सर्वथा, अर्जुन की आवाज ।।
अनुचित होता तो न वे, आज्ञा देते आप।
वे का नाम बताइये, आशय करिए साफ ।।

वे है वे सुरपति स्वयं, है उनका आदेश।
मै अर्जुन के चित्त को, करूँ प्रसन्न विशेष ॥

देख! तुम्हे मै तो नही, कर सकता स्वीकार।
आई है जिस ओर से, जाये आप पधार ॥

विशेष आग्रह ·

तर्ज-कव्वाली

उर्वशी बोली मुझे, ऐसे नही ठुकराइये।
पास आने दीजिए, इच्छा सहित अपनाइये....॥
लालसा है तीव्र मेरी, लाभ लेने दीजिए।
भय किसी भी बात का मत खाइए शरमाइए....॥१॥
हाथ कानो पर लगा आखे झुकाकर शर्म से।
कहा अर्जुन ने न ऐसे शब्द भी फरमाइए....॥२॥
आप जननी तुल्य हो, कुरुवंश का मै अंश हूँ।
धर्म का कुल जाति का, गौरव नही गिरवाइये....॥३॥

कोप और शाप :

तर्ज--राधेश्याम

रूखा उत्तर सुन, अर्जुन का, हुई उर्वशी कुपित विशेष।
काम, कोप में परिणत होता, रीति यहाँ यह रही हमेश ॥
कहा उर्वशी ने इस हठ का, निकलेगा परिणाम बुरा।
एक बार क्या बार-बार यो, बोली बाते घुमा-फिरा ॥
कहा पार्थ ने कुछ भी हो मैं, अपना धर्म न छोड़ूँगा।
किसी उर्वशी से भी अपना, तन सम्बन्ध न जोड़ूँगा ॥

दोहे

दिया उर्वशी ने उसे, मुख से यह अभिशाप।
तुम्हे नपुसक बोलकर, जानेगे जन साफ ॥

बृहन्नला के नाम से, रहे पार्थ अज्ञात ।
शाप उर्वशी का लगा, थी इतनी सी बात ।।
यह भी अर्जुन के लिए, सिद्ध हुआ वरदान ।
शापो से भी शांति का, गुण लेते गुणवान ।।

कथासार :

तर्ज--राधेश्याम

रही उर्वशी पैर पटक कर, अर्जुन अडिग रहे मन से ।
धर्म अड़िगता, मन की स्थिरता, जुड़ी हुई थी जीवन से ।।
पुष्कर पढो महाभारत मे, शिक्षाओ का पार नही ।
धर्म छोड़ने वाली बाते, करो कभी स्वीकार नही ।।
उग्र विचार नही मैं रखता, करता केवल उग्रविहार ।
दक्षिण की यात्रा मे सुन्दर, कर पाया रचना तैयार ।।

आधार : वैदिक महाभारत : वनपर्व



21
सच्ची सलाह

सत्य का भाग :

तर्ज—प्यारे भारत में

सत्य के अभ्यासी, देते सत्य सलाह ।
सत्य के विश्वासी, बनकर बेपरवाह....।।
मित्र शत्रु का भेद न करते, केवल सत्य बात उच्चरते ।
गिनते झूठ गुनाह ।। सत्य....१।।
सत्य छुपाना नही जानते, इसमें ही हित निहित मानते ।
यश की तजते चाह ।। सत्य २।।
माँगे अगर सलाह तुम्हारी, दो उसको शिक्षा हितकारी ।
करो नही गुमराह ।। सत्य....३।।
पुष्कर प्रबल मनोबल रखिये, सच्चाई का शुभफल चखिये ।
इसमें शांति अथाह ।। सत्य....४।।

युद्ध का नवमा दिन :

तर्ज—राधेश्याम

प्रबल प्रतापी भीष्मपितामह, सूर्य समान तपा करते ।
उनके हाथो नित्य हजारो योद्धा लोग खपा करते ।।
नौवे दिन का युद्ध भयंकर, अर्जुन भी टिक सके नही ।
वासुदेव रथ पहिया लेकर, दौडे प्रण पर टिके नही ।।
सध्या हुई गये है योद्धा, अपने अपने शिविरो मे ।
यथा चीटियाँ लौटा करती, अपने अपने विविरो मे ।।

अप्रसन्न थे पाडव, कौरव आज प्रसन्नमना थे सब।
हार पाडवों की होगी हम, विजयी बन जांयेगे अब ।।

युधिष्ठिर की निराशा :

दोहा

हुई रात को मंत्रणा, पाडव बने उदास।
धर्मराज बोले तुरत, होकर बहुत निराश ।।

तर्ज–कव्वाली

क्या करूँ ? कैसे करूँ ? कुछ समझ मे आता नही ।
नीद की तो बात छोडो, अन्न भी भाता नही. ..।।
जो पता होता मुझे तो, युद्ध भी करता नही ।
युद्ध मे हम पांडवो का अब रहा त्राता नही .।।१।।
छोड़ कर रणभूमि वन मे, मै चला जाऊँ अभी ।
भीष्म का बल नाशकारी तेज सहपाता नही....।।२।।
मै न जीवित रह सकूंगा, धर्म से च्युत हो वहा ।
पाँडवो से विजय का अब, दीखता नाता नही...।।३।।

कृष्ण का विश्वास :

तर्ज–राधेश्याम

बोले कृष्ण-युधिष्ठिर से मन, घबराओ न निराश वनो ।
जीत आपकी ही होगी है, मेरा यह विश्वास सुनो ।।
सूर्य समान बडे तेजस्वी शूर वीर भाई प्यारे ।
उठती नही कल्पना, कौरव-जीते, फिर पाडव हारे ।।
कुछ न बिगाड सका है अर्जुन, दादेजी का नौ दिन मे ।
बाल ब्रह्मचारी होने से, शक्ति विचित्र भरी इनमें ।।
"इच्छा मृत्यु" भीष्म है इनको, शातनु से वरदान मिला ।
जव तक येन मरेगे तव तक, कौरव का मजबूत किला ।।

उन्हे मारने वाला कोई, होगा नही दूसरा नर ।
अपने आप मरेगे ये तो, निकला सब लोगों का स्वर ॥

चलो, चलें :

दोहा

धर्मराज को आगई, एक बात अब याद ।
सारे ही सुनने लगे, तजकर विषम विवाद ॥

तर्ज—कव्वाली

कहा भीष्म ने मुझे एक दिन, मैं हूँ साथ तुम्हारे जी ।
दुर्योधन के साथ देह से, लोग जानते सारे जी····॥
विजय तुम्हारी होगी मन से, यही चाहता रहता हूँ ।
अन्यायी दुर्योधन कौरव, आखिर मे तो हारे जी····॥१॥
चलो, उन्ही से पूछे, वे ही देगे नेक सलाह हमें ।
सदा सत्यभाषी है वे क्यो, वचन असत्य उचारे जी····॥२॥
सभी एक मत होकर पाँडव, कृष्ण भीष्म के पास गये ।
लेटे हुए भीष्म शय्या पर, पाये दर्शन प्यारे जी····॥३॥

दोहे

किया पाडवो ने उन्हे, सविनय पुण्य प्रणाम ।
हम आए है शरण सब, सफल कीजिए काम ॥
हाथ उठा करके दिया, सबको आशीर्वाद ।
देख सभी को सामने, पाया परमाल्हाद ॥

तर्ज—राधेश्याम

क्या इच्छा लेकर आए हो, बोलो पूर्ण करूँगा मै ।
विजय तुम्हे दिलवाने को ही, इच्छामृत्यु मरूँगा मै ॥
नेक सलाह तुम्हे दूंगा मैं, यह मेरा कर्त्तव्य पुनीत ।
विना उपाय बताये कैसे, होगी कहो तुम्हारी जीत ॥

दोहे

एक शिखण्डी नाम का, पुरुष तुम्हारे साथ।
जनमा स्त्री के रूप में, निश्चित है यह बात।।
तप बल से वह नर बना, कहता मेरा ज्ञान।
मैं उसको स्त्री मानता, साक्षी श्री भगवान।।
होगा मेरे हाथ से, उस पर नही प्रहार।
उसको सम्मुख रख मुझे, अर्जुन देगा मार।।
सच सच अपनी मृत्यु का, बतला दिया उपाय।
पुष्कर मुनि इतिहास का, यह स्वर्णिम अध्याय।।

दोहा

लिया हैदराबाद मे, गर्मी का कुछ स्वाद।
पुष्कर मुनि पाता नई, रचना से आल्हाद।।

आधार—महाभारतः भीष्मपर्व



22

वशीकरण का रहस्य

मन्त्र यही है :

तर्ज--जादू नगरी से

पति को वश करने की बात, है यह बात स्त्रियो के हाथ ।
सत्यभामा से द्रोपदी ने ऐसे कहा जी.. .।।
पति हो आधीन मेरे, स्त्रियो की ये इच्छा ।
वही पति देवता है, वही पति देव अच्छा ।
कहना माने दिन रात, पूछे बात जोडकर हाथ ।। सत्य.. १।।
मन मिल जाए कैसे, तन मिल जाने से ।
मन मिलता है मन,--मन से मिलाने से ।
मिलना मन का मन के साथ, किस्मत ऊँची करामात ।। सत्य २।।
पति की जो आज्ञा नही, पालती--पलाती ।
छाती पतिदेव की वह, गृहिणी जलाती ।
पति की चाहा करती घात, बनती विधवा स्वय अनाथ ।।सत्य .३।।
देती है धर्मपत्नी, धर्म मे सहारा ।
उसको पति का सुख, प्राणो से प्यारा ।।
स्त्री का धर्म यही प्रख्यात, मारे विषयेच्छा पर लात ।। सत्य ४।।

मिलने गए थे

तर्ज--राधेश्याम

कृष्ण सत्यभामा को लेकर, मिलने को आये वन मे ।
अपने वालो से मिलने की, आ जाया करती मन मे ।।

तर्ज–हरिगीति

सत्यभामा द्रौपदी से, मिल हुई खुश खुश परम ।
हो रहा था बहुत दिन से, सत्यभामा को भरम ।।
द्रौपदी के पास कोई, मंत्र अथवा तंत्र है ।
पाच पति होते हुए भी, ये नही परतत्र है ।।
श्यामसुन्दर एक को भी, मैं न वश कर पा रही ।
अग्रमहिषी होगई, सुख मे न पल भर पा रही ।।
जडी बूटी जंत्र जादू मत्र टोना दो बता ।
हो नही सकता तुम्हे, इसका न हो कुछ भी पता ।।

द्रौपदी का उत्तर :

तर्ज–राधेश्याम

कुछ भी नही जानती मैं तो, यंत्र मत्र जादू टोना ।
और यही विश्वास हृदय मे, यत्र मत्र से क्या होना ।।
यंत्र मत्र जादू टोने कर, जो पति को वश करती है ।
जान-बूझकर वेली-वन मे, गड्ढे बीच उतरती है ।।
पति के तन पर, पति के मन पर, दुष्प्रभाव पड़ता भारी ।
कभी कभी पति को हो जाती, पागलपन की बीमारी ।।
धर्म और धन गॅवा बैठती, टोनो पर करके विश्वास ।
ऐसी बुरी स्त्रियो को आने–देना कभी न अपने पास ।।
बहन! तुम्हे बतला सकती हूँ, पति को वश करने का पथ ।
जिसमे नही कही कठिनाई, सीधा बड़ा सरल अत्यन्त ।।

सरल उपाय ·

तर्ज–सेवो सिद्ध सदा

पति को वश मे करने वाली, बाते याद रखो दो चार..।।
पति की इच्छा को पहचानो, करो उसे स्वीकार ।।
सेवा करके पति चरणो की, करो नही अहँकार..।।१।।

मधुर मधुर वाणी से पति का, कर स्वागत सत्कार ।
पर-पुरुषो पर नजर न डालो, पालो कुल आचार....।।२।।
पीछे सोना पहले जगना, तज आलस तज हार ।
घर की उचित व्यवस्था द्वारा, सुखी करो घरबार....।।३।।
दुर्व्यसनों से दूर रहो नित, हंसो नही बेकार ।
सुख मे साथ, साथ दे दुख में, ऊँचे रखो विचार.. ।।४।।
तोड़ो नहीं मनोबल पति का, पति जीवन श्रृंगार ।
पति का दिल न बनाना छलनी, तीखे ताने मार....।।५।।

कथासार :

तर्ज—राधेश्याम

सुनकर सत्य सत्यभामा पर, पड़ा बहुत अनुकूल प्रभाव ।
पुष्कर कभी सुधर भी जाते, बुरी स्त्रियो के बुरे स्वभाव ।।
किया भेट आचार्य प्रवर ने, मुझे यहाँ अभिनन्दन ग्रन्थ ।
जिसमे था देवेन्द्र शिष्य का, संपादन का श्रम अत्यन्त ।।

दोहा

संघ हैदराबाद का, बहुत बड़ा अनुकूल ।
मुझे मिले थे भेट में, श्रद्धा के दो फूल ।।

आधार—महाभारतः वनपर्व



23

समय बड़ा बलवान

समय बड़ा है :

तर्ज–सेवो सिद्ध सदा

नर का क्या बलवान जगत में, देखो समय बड़ा बलवान।
समय साथ देने पर बनता, नर जग मे धनवान।
समय साथ देने पर पूजा, पाता है विद्वान.. ।।१।।
समय साथ देने पर होती, सुखकारी सन्तान।
समय साथ देने पर मिलता, दाटा हुआ निधान.. ।।२।।
समय साथ देने पर तरुवर, बन जाता फलवान।
नर न बडा है समय बडा है, कहते श्री भगवान... ।।३।।

द्वारका नाश :

तर्ज–ख्यालकी

सुन समाचार ये, अर्जुन आये है नगरी द्वारका।। ।।
परमधाम पहुँचे है देखो, कृष्ण और बलराम।
अन्य अनेक प्रमुख यादव जन, रहा न उनका नाम जी ।।सुन····१।।
बालक वृद्ध स्त्रियो को लेकर, हथणापुर को आते।
अर्जुन जैसे महाबली नर, अपना फर्ज बजाते जी ।।सुन·· २।।
पुरी द्वारका गई सिधु मे रहा न नाम निशान।
क्योंकि द्वारकापति ही थे वस, एक बडे पुनवान जी ।।सुन····३।।
देख देव की लीला अद्भुत, चकराये नर सारे।
निकल पडे हम कुछ ही पहले, अच्छे भाग्य हमारे जी ।।सुन ४।।

लुटेरे मिल गए

तर्ज--राधेश्याम

गिरि से गिरि कानन से कानन, करते पार चले जाते ।
खाते कही कही रुक जाते, गीत भजन हरिगुण गाते ।।
डाल पडाव पंचनद में जब, करते थे सारे विश्राम ।
मिला लुटेरों का दल जिसका, रहा लूटने का ही काम ।।
देख अकेला अर्जुन को इन-लोगो ने बोला धावा ।
वन था कोर्ट, कोर्ट मे डाकू, गए लिखाने को दावा ।।
अर्जुन ने ललकारा उठकर, भागो जो हो प्यारे प्राण ।
तुम्हें मारने को जब तक मै, नही धनुष पर रखता बाण ।।
डाकू खड़े हो गए डटकर, आओ लड़ो हमारे साथ ।
जिसने कर्णवीर को मारा, हम भी वे देखेगे हाथ ।।
अर्जुन ने गॉडीव उठाया, थर थर लगे कॉपने हाथ ।
प्रत्यँचा भी चढ़ा न पाये, हुई अचम्भे वाली बात ।।
किया धनुष टँकार न लेकिन, निकला साधारण सा स्वर ।
जिससे महारथी डर जाते, डरते नही लुटेरे नर ।।
दिव्यास्त्रो का स्मरण किया पर, विधियॉ उनकी भूल गए ।
अर्जुन का बलक्षीण देखकर, डाकू मन मे फूल गए ।।
स्त्रियाँ और सम्पत्ति लूटकर, चले गए डाकू सारे ।
समय बड़ा बलवान आज तो, महारथी अर्जुन हारे ।।
यही समय का फेर समझलो, अर्जुन वही वही थे बाण ।
सहना कितना कठिन हो गया, आज पराजय का अपमान ।।

कथासार :

मुनि पुष्कर का ज्ञान ध्यान भी, मान समय को देता है ।
समय देखने वाला अपने, साथ समय को लेता है ।।
महावीर प्रभु कब बोले थे, देख समय गौशाले का ।
समय विना मीठा कब लगता, मीठा पान मसाले का ।।

परखो समय, समय से पहले, सावधान बन जानाजी ।
आरती गाने के टाइम मे, नही प्रभाती गानाजी ।।

विहरण उद्बोधन लेखन को, प्रेरित करता समय सदा ।
दक्षिण के इन श्री सघों मे, धर्म विजय है अभय सदा ।।

दोहा

श्री आनन्दाचार्य के, साथ हुआ चौमास ।
दो हजार छत्तीस का, निर्मलतम इतिहास ।।

संत सभी उन्नीस हम, सतियां भी उन्नीस ।
लेकिन रचनाये हुई, सभी यहाँ इक्कीस ।।

आधार---महाभारतः मोसलपर्व

24

अतिथि देवो भव

अतिथि की सेवा :

तर्ज–प्यारे भारत में

इसका रखना ध्यान, अतिथि है देव महान...।
अतिथि आँगने मे आ जाये, सेवा उसकी सही बजाये।
हो जाये कल्यान ।। अतिथि....१।।
भेद अतिथि में किया न जाता, बदले में कुछ लिया न जाता।
दाता देता प्रान ।। अतिथि....२।।
कथा कपोत-कपोती वाली, देती हमको दृष्टि निराली।
आत्मा अति बलवान ।। अतिथि... ३।।
वधिक अतिथि की सेवा करके, अर्पण हुए स्वयं जल भरके।
सुनो सरस आख्यान ।। अतिथि... ४।।

धर्मराज के सामने :

तर्ज–राधेश्याम

भीष्म पितामह कहते, सुनते–धर्मराज देकर के ध्यान।
वधिक, कपोत, कपोती वाला, शिक्षाप्रद सुन्दर आख्यान ।।
वन में एक व्याध रहता था, मार पक्षियों को खाता।
मांसाहारी लोगों से कब, मांसाहार तजा जाता ।।
मिला एक दिन इसे न पक्षी, निकल गये है तीन प्रहर।
वर्षा लगी बरसने भारी, जोर लगाती ठहर-ठहर ।।

भूखा, भीगा, लगा धूजने, मिली कपोती कही अचेत ।
उसे उठाकर किसी वृक्ष के, नीचे आया धर कर हेत ।।
अकडे हाथ पांव अब कैसे, इसें भून कर खायेजी ।
व्याध अचेत, अचेत कपोती, दोनो ही दुख पायेजी ।।

कपोत के स्वर :

उसी वृक्ष पर एक कबूतर, बैठा, करता रुदन विलाप ।
कबूतरी आई न अभी तक, कैसे होगा प्रिया-मिलाप ।।
निकली सुबह-सुवह वह घर से लौटी नही अभी तक घर ।
बहुत तेज वर्षा मे रहता, उसके मर जाने का डर ।।
जाऊँ कहाँ अँधेरे मे अब, ढूँढूँ उसे कहाँ पर मै ।
जो न उसे पाऊँगा तो बस, रोऊँगा जीवन भर मै ।।

कबूतरी का उत्तर ·

दोहे

सुनकर रुदन कबूतरी, बोली सुनिये नाथ ।
नीचे ही हूँ मै यहाँ, इसी व्याध के हाथ ।।

देख उसे वन्दी तुरत, उतरा आप कपोत ।
मुक्त बनाने के लिए, लगा खोजने स्रोत ।।

वोली तुरत कबूतरी, सुनिए प्यारे नाथ ।
मुझे छुडाने की नही, चिन्ता वाली बात ।।

घर आये इस अतिथि की, सेवा करिये आप ।
करे अतिथि-सेवा अगर, कट जायेगे पाप ।।

तर्ज—राधेश्याम

यद्यपि बहुत अधर्मी है यह, लेकिन अतिथि हमारा है ।
आश्रय लिया हमारे घर पर, हमें प्राण से प्यारा है ।।

अतिथि-सेवा :

उडा कबूतर सूखे पत्ते, चुन चुन लाया सूखा घास।
ज़लती लकड़ी भी ले आया, लगा तपाने बैठा घास ॥

गर्मी का संचार हुआ तन, व्याध उठा आँखे खोली।
भूखे मुख से निकल न पाती, मन की बात तथा बोली ॥

कहा कबूतर ने क्या सेवा करूँ ? आपकी व्याध भले।
भूखा हूँ खाने को दो बस, प्राण अभी निकले-निकले ॥

सोचा कुछ न पास में, क्या दूँ ? केवल है यह मेरा तन।
कूद पड़ा है उसी आग में, विस्मित बना व्याध का मन ॥

कबूतरी को छोड़ दिया है, उपजी दया व्याध के मन।
नाथ नाथ कर कबूतरी तो, करने बैठी करुण-रुदन ॥

विना आपके क्या जीऊँगी, आऊँगी अब किसके काम।
विना आपके ले न सकूँगी, प्रेम-शाँति से प्रभु का नाम ॥

जैसे आप आग मे कूदे, कूद करूँ मैं तन का त्याग।
सेवा करूँ अतिथि की मानूँ, इसमें मेरा परम सुभाग ॥

व्याध का हृदय परिवर्तन :

देख कपोत-कपोती का यह त्याग अतिथि-सेवा भारी।
व्याध त्याग देता आजीवन, वृत्ति बड़ी हिसाकारी ॥

फल फूलो से उदर-पूर्ति कर, जीवन यापन करता व्याध।
सभी प्राणियो के प्रति मन मे, उपजा मैत्री-भाव अगाध ॥

दव मे जलकर भस्म हो गया, मर कर शुभगति को पाया।
व्याध, कपोत, कपोती, का यह, वर्णन सब के मन भाया ॥

कथासार :

आहुति अपनी देने वाला, औरो का करता उद्धार।
मुनि पुष्कर कर सच्ची सेवा, धर्म अहिसा का आधार ॥

ज्ञान यही है, दान यही है, और बडा बलिदान यही।
समझे आये हुए अतिथि को, आये है भगवान यही॥

महावीर की जन्म जयती दो हजार पैंतीस प्रवर।
पुष्कर मुनि जन विचर-विचर कर फैलाते जागृति का स्वर॥

आधार : महाभारतः शांतिपर्व



1
ऊँचा मनोबल

श्रेष्ठ शकुन :

तर्ज–चुप-चाप

शकुनो मे श्रेष्ठ है, शकुन ऊँचे मन का ।
और ऊँचा शकुन है, ऊँचे ही वचन का....।।
मनोबल ऊँचा, ऊँचा चाहिए विचार जी ।
ऊँची वाणी बोलो ऊँचा करो व्यवहार जी ।।
मनोबल बिना टूट सकता न तिनका ।।शकुनों....१।।
ऊँचे मनोबल वाला मेरु को हिलाता है ।
ऊँचे मनोबल वाला मृत को जिलाता है ।
ऊँचे मनोबल मे न काम कोई धनका ।।शकुनों....२।।
समाचार मरने का लाता, रोते जाता जो ।
सफल न होता पहले सशय उठाता जो ।
बुरा माना जाता माथा पहले ही जो ठनका ।।शकुनों....३।।
शास्त्र, अनुभव, जनश्रुति, मति-एक है ।
मन ऊचा रखने का रखना विवेक है ।
अनुभव करो आप शास्त्र के कथन का ।।शकुनो....४।।

अमर कंका के बाहर :

तर्ज–राधेश्याम

पुरी अमर कका जा पहुँचे, कृष्ण सहित पाचों पांडव ।
मानो महादेवजी पहुँचे, नृत्य दिखाने को तांडव ।।

ज्ञान नाभ नृप इधर आ गया, पाडव इधर खड़े आकर ।
समर्दनन्दिनी को मगवाया था, इसने ही उठवा कर ॥
पाँचो पाँडव टिक न सके है, पदमनाभ के दे‍व प्रहार ।
खाकर मार हार कर भागे, छोड वही पर ही हथियार ॥

कृष्ण के पास

बोले कृष्ण चले थे जव तुम, क्या बोले क्या किया विचार ।
हार जीत का पता वही पर, लिखा हुआ रहता साकार ॥
हम है अथवा पद्मनाभ है, ऐसा बोले किया विचार ।
तुम से यही होगई गलती, बोले ऐसे कृष्ण मुरार ॥
शत्रु समान मान लेने से, वह न पराजित हो पाता ।
विजय आपकी होती मन में, ऊचा भाव अगर आता ॥

विजय का मत्र :

दोहे

पद्मनाभ है ही नही, हम है राजा आज ।
मन मे ऊँचे भाव हो, ऊँची हो आवाज ॥
खडे रहो तुम देखते, मैं करता हूँ युद्ध ।
ऊंचा मन ऊँचे वचन, वल कर देते शुद्ध ॥
गये कृष्ण पाई विजय, मिला विजय का मत्र ।
मन के ऊँचे भाव से, भरो विजय का यंत्र ॥

कथासार :

तर्ज—राधेश्याम

ज्ञाता मे वर्णन आता है, जैन महाभारत मे भी ।
शुभ कार्यो के लिए नही क्या ? हम लिखते है अथ मे भी ॥
मनका शकुन,शकुन वाणी का, लेकर करो सफलता प्राप्त ।
पुष्कर एक मनोबल ऊंचा, कर लेना ही है पर्याप्त ॥

दोहा

दो हजार सेतीस की, चैत्र पूर्णिमा जान ।
रचना के मिष दे रहा, पुष्कर जीवन ज्ञान ॥

आधार . जैन महाभारत तथा ज्ञाता सूत्र

आये ।

ए ।।

।

2

विजय का मार्ग

क्रोध से क्रोध :

तर्ज–मेरा दिल तोड़ने वाले

क्रोध से क्रोध दानव पर, विजय पाई नही जाती ।
विजय पाने की रीति भी, सभी को है नही आती....।।
तुम्हें जो गालियां दे तो, उसे दो गालियां वापिस ।
नीति ऐसे बताती है, नही ठंडी नही ताती ।।क्रोध....१।।
तुम्हें जो गालियाँ दे तो, उसे गाली नही देना ।
शांति रखकर सुने जाओ, खड़े हो खोलकर छाती ।।क्रोध...२।।
नही जब पास मे गाली, निकालोगे कहाँ से तुम ।
हजामत क्या करे रेजर, अगर उसमें न हो पाती ।।क्रोध....३।।

वन विहार :

तर्ज–राधेश्याम

दारुक, सात्यकि, और जनार्दन, श्री वलराम गये वन मे ।
क्रीडा करने की इच्छा भी; जग आया करती मन में ।।

दोहे

अस्ताचल की ओट में, चला गया भास्वान ।
लेट हो गये हम बहुत, अब आया है ध्यान ।।
ठहर गये वन में वही, देख एक वट वृक्ष ।
वन मे चलना रात को, बडी उठाना रिक्स ।।

ज्ञान
समझ

री-बारी से बने, चारो पहरेदार।
जीवन-रक्षा के लिए, ये अनुकूल विचार।
प्रथम प्रहर का बन गया, दारुक ठेकेदार।
पहर दूसरे का मिला, सात्यकि को अधिकार।
पहर तीसरे मे स्वयं, जागेगे बलराम।
आया चौथे पहर पर, मधुसूदन का नाम ।।
तीनो सोए शान्ति से, दारुक पहरेदार।
जाग रहा वन मे खड़ा, लिए हाथ हथियार ।।

दानव से लड़ाई :

तर्ज—राधेश्याम

एक पिशाच वहाँ पर आया, दारुक से बोला है स्पष्ट।
मानव मास प्राप्त कर अपना, दूर करूगा काया-कष्ट ।।
तुम न विरोध करोगे तो इन, तीनो को ही मारूंगा।
तुम्हे छोड दूँगा मै जीवित, हित विस्तृत स्वीकारूंगा ।।
दारुक बोला-प्राणो का तू, मुझे प्रलोभन नही दिखा।
मेरे आगे कोई दानव, पैर जमाकर नही टिका ।।
कितना गुना अधिक होता है, मानव बल से मेरा बल।
किसमे कितना गुन है इसका, अभी पता जायेगा चल ।।

दोहे

मानव और पिशाच का, हुआ भयकर युद्ध।
करता तीव्र प्रहार तन, दारुक बनकर क्रुद्ध ।।
बढता गया पिशाच का, बल साहस आकार।
दारुक ने मानी नही, लड़ने से भी हार ।।
बीत चुका है प्रहर अब, सोया दारुक आप।
क्षत विक्षत तन हो चुका, थका अनाप-सनाप ।।

कृष्ण का तरीका :

आये ।

ए ।।

तर्ज—राधेश्याम

प्रहर दूसरे में सात्यकि का, दानव से संग्राम चला ।
जागे जब बलराम देखलो, उनसे भी वह नही टला ।।
हारे तीनों जीता राक्षस, निकला कोई सार नही ।
कृष्ण उठे अपनी वारी पर, हाथों में हथियार नही ।।
राक्षस ने ललकारा मैं हूँ, भूखा इनको खाऊँगा ।
बाधक तुम न बनोगे तो मै, तुमको नही सताऊँगा ।।
बोले कृष्ण हमारे होते, लगा न सकते इनके हाथ ।
दानव कैसे सह सकता है, स्पष्ट चुनौती वाली बात ।।
खड़े हो गए कृष्ण सामने, बोले अक्षर एक नही ।
तनिक क्रोध आने न दिया है, खोया धर्म विवेक नही ।।
शान्त देखकर दानव वोला, लड़ते करते क्यो न प्रहार ।
शुरू करो तुम लड़ना पहले, मेरे पास नही हथियार ।।
तुम हो बड़े बहादुर योद्धा, वन के स्वामी बहुत अजेय ।
तुम्हें पराजित करने वाला, जनमा कौन यहाँ श्रद्धेय ।।
सुनकर मधुर वचन राक्षस का, क्रोध हो गया है ठडा ।
ठडा पडता नही क्रोध तब, जब सिर पर पडता डंडा ।।
ज्यों-ज्यो रात बीतती जती, राक्षस का आकार घटा ।
थक कर लुढक गया बेचारा, नही वहाँ पर रहा डटा ।।

कृष्ण जीत गये :

तीनो जगे कृष्ण ने पूछा, चोटे लगी बहा क्यो रक्त ।
लड़ते रहे रात भर हम तो, सोये अभी अभी ही फक्त ।।
क्या न तुम्हारे सन्मुख राक्षस, आया नही बताओ जी ।
है क्या यही तुम्हारा राक्षस, परखो आगे आओ जी ।।

ज्ञान ... यही दुष्ट दानव है, इसको कैसे दिया हरा।
सम... हुआ अधमरा सामने, लगता है अब मरा-मरा ॥

...र :

शस्त्र शान्ति का, शस्त्र प्रेम का, पाया करता विजय हमेश।
क्रोध-क्रोध से जीता जाये, ऐसा सुना नही उपदेश ॥
सभी प्रशसा करते मुख से, आये अपने-अपने स्थान।
क्रोध विजय करने का देखो, दिया कृष्ण ने मन्त्र महान।
पुष्कर क्षमा धर्म के बल से, विजय क्रोध पर पाना जी।
सुन लेना गाली पर, वापस-गाली नही सुनाना जी ॥
कितनी देगा ? देता-देता, गाली दे थक जायेगा।
नही मिलेगा आगे रस्ता, पथिक वही रुक जायेगा ॥
दो हजार सेतीस साल की, आखातीज मनाई है।
केसरियाजी मे कर रचना, मन की हूँस पुराई है ॥

आधार —जैन महाभारत



आये ।

ए ।।

उ ।

एक चुना

दोनों में से एक :

तर्ज—चुपचुप

दुनिया में चुना जाता दोनों मे से एक ही ।
चुनने में स्पष्ट होता मन का विवेक ही ।।
चुनने का परिणाम बाद में ही आता है ।
एक खुश होता, एक रोता पछताता है ।
चुनते है दोनो चाहे अच्छी तरह देख जी··· ।।१।।
चुनने का मौका खुल्लमखुल्ला दिया जाता है ।
इच्छा अनुसार ही चुनाव किया जाता है ।
पीछे हम कहें चाहे ऐसा ही था लेख ही···· ।।२।।
दुनिया की जिन्दगी शराब ने खराब की ।
शराबी चुनेगा फिर भी बोतल शराब की ।
एक को ही किया जाता राज्य अभिषेक ही···· ।।३।।
एक ओर मै हूँ कृष्ण, एक ओर सेना है ।
दोनो में से एक एक, दोनो को ही लेना है ।
गिनने में साथ गिनो मीन और मेख ही···· ।।४।।

दोनों पहुंच गए

तर्ज—राधेश्याम

अपनी अपनी तैयारी में, लगे हुए थे दोनो पक्ष ।
है मजबूत पक्ष किसका यह, सभी समझ लेते प्रत्यक्ष ।।

ज्ञान [illegible]य स्थानो पर भेजे, अपने अपने दूत विशेप ।
सम[illegible]ता हमको ही दोगे, भेज दिया ऐसा सन्देश ।।
अर्जुन पहुंचा पुरी द्वारिका, पहुँचा इधर सुयोधन भी ।
कृष्ण हमारे, कृष्ण हमारे, कहता था इनका मन भी ।।
राजमहल मे दुर्योधन ने, पाया पहले पुण्य-प्रवेश ।
अर्जुन भी आने वाला है, समाचार था इसे विशेप ।।
सोये हुए कृष्ण थे उनके, सिरहाने सिहासन पर ।
दुर्योधन जा बैठ गया है, आशा बहुत वडी धर-कर ।।
महलो मे आकर अब अर्जुन, हुआ पाव की ओर खड़ा ।
पीताबर ओढे पोढे थे—कृष्ण, मनोहर दृश्य वडा ।।
जगे, उठे, बैठे, मधुसूदन, दृष्टि पड़ी है अर्जुन पर ।
कैसे आये सुबह-सुबह ही सकुशल है ? सारे घर-पर ।।
दुर्योधन पीछे से बोला मैं भी यही उपस्थित हूँ ।
कृष्ण घूमकर देख, वोलते, आज बहुत ही विस्मित हूँ ।।
दोनो के आने का कारण, क्या है दोनो स्पष्ट करो ।
सहायता दो आप युद्ध मे, बस इतना सा कष्ट करो ।।
सहायता ही मुझे चाहिए किया निवेदन अर्जुन ने ।
अर्जुन के श्री कृष्ण मित्र है, सोच लिया दुर्योधन ने ।।

कुछ जटिल प्रश्न :

तर्ज—राधेश्याम

जैसा अर्जुन वैसा ही मैं, क्या न आपके लिए कहो ।
पहले मै आया हूँ इससे, आप हमारी ओर रहो ।।
पहले आए होगे ? लेकिन, अर्जुन को पहले देखा ।
पहला यह माना जायेगा, खिची नीति की शुभ रेखा ।।
मै इससे पहले आया हूँ, अपना पक्ष किया मजबूत ।
आने से क्या लाभ दृष्टि जब, देती इसके लिए सबूत ।।

दोनों को दूंगा :

मेरी सहायता लेने के लिए आप दोनो आये।
दोनो ही लेकर के जाये, क्यो कोई खाली जाए ॥
सहायता दोनो को दूंगा, यह कैसे ? अर्जुन बोला।
दोनो को खुश रखने वाला, पक्ष जनार्दन ने खोला ॥

दोनों में से एक :

तर्ज--चुपचाप

एक ओर मै अकेला एक ओर सेना है।
दोनों मे से एक अच्छा, लगे वो ही लेना है ॥
युद्ध न करूंगा मै, न शस्त्र भी उठाऊँगा।
शर्त रखता हू उसे अंत तक निभाऊगा ॥
नाव है समुद्र में तो नाविक को खेना है....॥१॥
चुनने का अधिकार पहले किसे देते हो।
मुझे देते हो या पीछे बैठा उसे देते हो।
कोई कहता तोता पहले कोई कहता मैना है ...॥२॥

पहला अधिकार :

तर्ज--जादूनगरी

पहले चुनने का अधिकार, अर्जुन ! तेरा है रे यार...।
दोनों मे से ते चुनले तू चुनले कोई सा ॥
अर्जुन जो माग लेगा सेना नारायणी।
अकेला रहेगा पीछे, द्वारका का यह धणी ॥
कैसे होगा बेड़ा पार, मेरी हार होगी हार ॥ दोनो ?

अर्जुन का चयन :

तर्ज--राधेश्याम

मुझे आपके सिवा न कुछ भी लेना है स्वीकार सुनो।
चुना आपको कहा आपने, दोनो मे से एक चुनो ॥

जहां नही हो आप आपकी सेना से क्या काम मुझे ।
मात्र आप ही मुझे चाहिए, और आपका नाम मुझे ॥
सुनते ही दुर्योधन का मुख-प्रसन्नता से चमक उठा ।
एक अरब गोपों की सेना सका यहाँ पर आज जुटा ॥

कथासार :

दोहा

उदारता श्री कृष्ण की, मानी जाती धन्य ।
सहायता देकर दिया, दिल का स्नेह अनन्य ॥
चुनने का अवसर दिया, लिया न सरपर भार ।
दोनो खुश होकर गए, अपने अपने द्वार ॥
पुष्कर यहाँ चुनाव में, जो जाता है जीत ।
होती उसकी युद्ध में, निश्चित जीत पुनीत ॥
ध्यान रखो चुनते समय, यही बुद्धि का काम ।
आ जाता अच्छा बुरा, जो होता परिणाम ॥
दो हजार सैंतीस का, मास ज्येष्ठ सुखकार ।
पुष्कर राजस्थान में, करता धर्म-प्रचार ॥

आधार :—महाभारत . उद्योगपर्व

4

छोटी सी भूल

तर्ज--हरिगीति

भूल होती आदमी से, जान में अनजान मे।
भूल का अनुकूल वासा, मान लो इन्सान में ॥
भूल का फल भोगना पडता सभी को बाद में।
है नही अपवाद इसमें, बाद मे न विवाद मे ॥

गिरगिट पर दया :

तर्ज--कोरो काजलियो

वन मे घूम रहे, यदुवंशी राजकुमार।
वन में घूम रहे वे एक न कई हजार··॥
प्यास लगी पानी नही, वे लगे ढूंढने वार····॥१॥
आये कूएँ पर सभी, था कूए मे अंधकार····॥२॥
घास लताओ से ढंका था, ऊँडा भी अनपार···॥३॥
देखा गिरगिट है पड़ा, किया करुणा मयी विचार····॥४॥

तर्ज--राधेश्याम

बाहर इसे निकाले इसको, उपजेगा आराम बड़ा।
पता नही इस कूएँ मे यह, कब से जनमा और पड़ा ॥
सबने मिलकर की कोशिश पर, सफल न हो पाये सारे।
गए कृष्ण को सूचित करने, हाँपे और थके सारे ॥
गिरगिट के प्राणों की रक्षा-करो निकालो कूएँ से।
मर जाता है घुट-घुट प्राणी, अंधकार से धुऐ से ॥

आये कृष्ण निकाला इसको, बोला वह नर वाणी में ।
सुनने की कहने की इच्छा, रहती है हर प्राणी में ।।

गिरगिट की बात :

वासुदेव, मै पूर्व जन्म मे नृपथा नृग था मेरा नाम ।
आप यहाँ पर कैसे जन मे, किए आपने थे शुभ काम ।।
मै मेरे कृत पापो का फल, भोग रहा हूँ हे गोपाल !
पाप आपने किया कौन सा ? गौदानी थे बड़े दयाल ।।
लाख इक्यासी दो सौ गौए, कई बार मे की थी दान ।
कहाँ गया वह पुण्य आपका, यही एक आश्चर्य महान ।।
किया-कराया सब मिट्टी मे, एक भूल ने मिला दिया ।
स्पष्ट बताये पाप कौन-सा, अनजाने मे हुआ, किया ।।
एक अग्निहोत्री ब्राह्मण था, चला गया था वह परदेश ।
उसकी एक गाय पीछे से घर से निकल पड़ी सुविशेष ।।
पता नही कब मिली गाय वह, आ मेरी गायों के साथ ।
नितप्रति एक हजार गाय का, दान किया करता मै प्रात ।।
गायों मे वह गाय दान मे, देने की कर बैठा भूल ।
गाय ढूँढता आया द्विज वह, पाकर के अवसर अनुकूल ।।

दोहे

उसने उस द्विज से कहा, मेरी है यह गाय ।
मुझे दान मे है मिली, मै क्या करूँ उपाय ।।
करते वाद - विवाद वे, पहुँचे मेरे पास ।
दोनो को मैने कहा, आप करो विश्वास ।।
मैंने गौ दी दान में, है यह मेरी भूल ।
गौ को लौटा दीजिए, बन मेरे अनुकूल ।।
उसके बदले लीजिए, गाये एक हजार ।
नृप का कथन किया नही, ब्राह्मण ने स्वीकार ।।

लिया कभी जाता न वह, दिया गया जो दान ।
ऐसी बातें सोचना, कहना भूल महान ।।
बेच दीजिए गाय वह, बदला जो न पसंद ।
प्राप्त दान को बेचता, महामूर्ख मतिमद ।।

दूसरा भी नहीं माना :

तर्ज--राधेश्याम

कहा दूसरे द्विज से द्विजवर ! मिल न सकेगी गाय यही ।
एक लाख गौवे ले जाओ, मानों मेरी बात सही ।।
मेरी, और यही गाय ही मुझे चाहिए लाख नही ।
रंग बदलते हो गिरगिट सम, रही तुम्हारी साख नही ।।
कह कर वे दोनो ही ब्राह्मण, चले गये दु:ख पा मन मे ।
अनजाने में एक भूल यह, कर पाया मै जीवन मे ।।
कर आयुष्य पूर्ण मै जनमा, गिरगिट की काया पाया ।
पडा हुआ हूँ इस कूएँ मे, केवल अधेरा छाया ।।

अब स्वर्ग में .

दोहा

सुनते सुनते कृष्ण कुछ, करने लगे विचार ।
छोटी-सी विष बूंद का, हो जाता विस्तार ।।

तर्ज--राधेश्याम

नृग राजा के हाथो से यह, भूल हुई अनजाने मे ।
भूल जानकर कभी न छोडी बार-बार पछताने में ।।
फिर भी गिरगिट बनकर नृप-नृग, दु:ख उठाते है भारी ।
इतने ही मे गिरगिट ने की, मर जाने की तैयारी ।।
नृग नृप मर कर गये स्वर्ग मे, पुण्य योग फल पाने को ।
पुष्कर प्रेरक पद्यावलियाँ, लिखता मन समझाने को ।।

कथासार :

दोहे

छोटी हो चाहे बड़ी, भूल हमेशा भूल ।
उडा न पाता भूल को, कोई भी वातूल ।।
भूलों को भूलो नही, करो न फिर से भूल ।।
भूल सुधारे आपकी, कर जीवन अनुकूल ।।
मुझे तारने का किया, तारक गुरु ने काम ।
भूल नही सकता कभी, पुष्कर गुरु का नाम ।।

आधार : महाभारत अनुशासन पर्व



5

नियम का प्रभाव

तर्ज–प्यारे भारत में

प्रतिज्ञा मत तोड़ो, चाहे हो नुकसान ।
नियम व्रत मत छोडो, चाहे हो नुकसान....।।
जब कठिनाई सम्मुख आती, तब मजबूत न रहती छाती ।
डिग जाता है ध्यान ।। प्रतिज्ञा....१।।
इधर-उधर वे खाते गोते, जो न नियम के पक्के होते ।
रहता नही निशान ।। प्रतिज्ञा....२।।
दृढ प्रतिज्ञ कृष्ण गुणधारी, दुनियाँ गुन की बनी पुजारी ।
सुनो एक आख्यान ।। प्रतिज्ञा....३।।

देवता आया :

तर्ज–राधेश्याम

"अधम युद्ध" मै नही करूंगा, ऐसा उनका एक नियम ।
नियम शब्द से पलते ज्यादा, अभिप्राय से पलते कम ।।
नियम परखने को आया है, एक देवता बनकर चोर ।
अश्व रत्न को ले भागा वह, चला नही सुभटो का जोर ।।
रथारूढ हो कृष्ण चोर के, पीछे चले उसे रोका ।
घोड़ा यही छोडदे तेरी, पार न पहुँचेगी नौका ।।
बोला चोर शक्ति है तो यह, घोड़ा ले लो आ जाओ ।
नहीं भागता यही खड़ा मैं, शक्ति भुजा की अजमाओ ।।

एक प्रश्नोत्तर :

दोहे

मैं रथ पर तुम भूमि पर, कैसे हो यह युद्ध ।
इसकी चिन्ता मत करो, सारे नियम विरुद्ध ।।
"अधम युद्ध" करता न मैं, तुम हो तस्कर एक ।
तो घोड़ा दूंगा नही, रहो निभाते टेक ।।
तू घोड़ा ले जा भले, मै न करुंगा युद्ध ।
अधम युद्ध का नियम ही, मेरा परम विशुद्ध ।।
सुनकर तस्कर देवता, मन मे हुआ प्रसन्न ।
दृढ़प्रतिज्ञ गुणवान है, वासुदेव श्री कृष्ण ।।

एक भेंट :

दिव्य रुप कर प्रगट स्वयं को, मेरी एक भेट मे दी ।
नियम धर्म की मन दृढता की, बहुत प्रशसा उसने की ।।

भेरी की आवाज से, मिट जाते सब रोग ।
रोग न फिर छह मास तक, दिखलाते दुखभोग ।।

प्रेम मधुर स्वर भरकर 'पुष्कर' पुण्य प्रसग सुनाता है ।
जो ढीले श्रावक है उनका मन मजबूत बनाता है ।।
दो हजार संतीस जेठ को, पुनम का दिन सुखकारी ।
परंपराये जैन जगत की, प्राणिमात्र को हितकारी ।।

आधार : त्रिषष्टिशालाका पुरुष चरित



6

गुरा की दृष्टि

दोष पर

तर्ज–कव्वाली

दोष पर जाती नजर, गुण पर नजर जाती नही ।
दोष मे गुण देखने की, रीति क्यों आती नही ॥
दोष है तो है, हमें क्या ? देखना है दोष ही ।
कौन लेता है चपाती जब कि वह भाती नही ..॥१॥
ढूँढ देखो गुण मिले तो , ग्रहण कर लेना उन्हे ।
दोष गुण मे ढूँढती - दुर्बुद्धि पछताती नही. .॥२॥
साथ रहकर गुण न अवगुण हो सके होगे नही ।
क्यो कि इनकी एक जैसी जाति या पाति नही.. ॥३॥
गुण प्रशसा कीजिए तज दीजिए अवगुण कथा ।
एक सा अधिकार सबका एक की थाती नही...॥४॥
गुण ,गुणानुराग होना बात है सौभाग की ।
दीप कैसे ज्योति दे जब , स्नेहयुत बाती नही ॥५॥

कृष्ण की परख

तर्ज–जादूनगरी से

हुई प्रशसा देवलोक मे, गुणग्राही है कृष्ण बडे ।
अवगुण पर पडती न नजर गुण, गुण पर उनकी दृष्टि पडे ॥
देव-सभा स्थित एक देव को, हुआ नही इस पर विश्वास ।
करने चला परीक्षा उनकी, रूप बदल कर धर उल्लास ॥

वन-विहार करने को जाते, रथारूढ होकर यदुनाथ ।
मृत कुतिया का रूप बनाकर देव पड़ा पथ मे साक्षात् ।।
कुतिया का शव सडा हुआ था, करते थे कीडे कुल-वुल ।
आती थी दुर्गन्ध दूर तक होता था तन मन व्याकुल ।।
रखकर नया रुमाल नाक पर, अनुचर सभी चले मुँह फेर ।
जल्दी जल्दी आगे निकले, नही एक ने भी की देर ।।

दाँत चमकते हैं .

कृष्ण पास से निकले उनने, नही नाक पर रखा रुमाल ।
और न सारथि से भी बोले, जल्दी कर रथ गति सभाल ।।
दात चमकते मोती जैसे, देखो इस मृत कुतिया के ।
कितने सुन्दर लगते है ये कृष्ण रग-सगति पाके ।।
सडीगली काया पर इनकी, नजर न पडी न बुरा बोले ।
सराहना की सुँदरता की, देख दांत धोले धोले ।।

देव खड़ा हो गया

देख देवता उठा, वहा पर, कुतिया नही नजर आई ।
जैसी सुनी प्रशसा वैसी, परखी और सही पाई ।।

तर्ज—हरिगीतिका

जो बुराई मे भलाई ढूँढ लेते वे सुखी ।
जो भलाई मे बुराई ढूँढ लेते वे दुखी ।।
ढूँढते रहिए भलाई जो भला बनना तुम्हे ।
ढूँढते रहिए बुराई, जो बुरा बनना तुम्हे ।।
खुद भला तो जग भला लोकोक्ति कितने काम की ।
देवता ने की प्रशसा आज श्री घनश्याम की ।।

दोहे

मुनि पुष्कर करते रहो, गुण गुणियो से राग ।
अवगुण अपने आप ही, दूर जायेगे भाग ।।
दो हजार सैंतीस का, मास भला आषाढ ।
आई उत्तम हृदय मे, धर्म शक्ति की बाढ ।।

आधार —श्री नन्दीसूत्र टीका

7

एक अनुपम सहयोग

गुण ही गुण

तर्ज--प्यारे भारत में

सेवा करने मे, गुण ही गुण है भाई।
सेवा करने मे; होती नही घिसाई· ।।
मन से करो, करो तन धन से, आश्वासन दे मधुर वचन से।
पूछो पीडा कांई ।। सेवा १।।
वृद्ध और बालक रोगी की, संसारी, त्यागी योगी की।
सेवा बडी भलाई ।। सेवा २।।
सहायता जिसको मिल जाती, उसकी कली कली खिल जाती।
पाते परम बड़ाई ।।सेवा··· ३।।
करो आप करवा सकते हो, भरो घाव भरवा सकते हो।
है यह प्रीति सवाई ।।सेवा ·४।।
पुष्कर सत्य धर्म है सेवा, समझो सेवा सूखा मेवा।
सेवा सरस मिठाई ।। ५।।

नेमिनाथ पधारे

तर्ज--राधेश्याम

नेमिनाथ भगवान पधारे, पुरी द्वारका के उद्यान।
सतो के उपयोगी होना, उद्यानो का सुन्दर स्थान ।।
चले कृष्ण परिवार सहित अब, चरण-वदना करने को।
प्रभु की चरण-वदना क्या है ? नावा भव से तरने को ।।

पुर के दरवाजे के बाहर, एक वृद्ध पर नजर पड़ी ।
उसकी काया की स्थिति भारी, चिन्तनीय, दयनीय बड़ी ॥

ईंटें ढोता था

तर्ज--प्यारे भारत में

ईंटे रखता था, एक एक कर घर में ॥
जर्जर अंग हो गया सारा, फिर भी काम उसे था प्यारा ।
शक्ति न बूढे नर में ॥ईंटे·· १॥
बाहर ढेर लगा था भारी, अंदर ले जानी वे सारी ।
कितनी आये कर में ॥···२॥

सहयोग सेवा

तर्ज–राधेश्याम

देख कृष्ण ने सोचा मन मे, बड़े उद्यमी बूढे लोग ।
ईंटे उठवा कर रखवा दू, कर दू कुछ सेवा-सहयोग ॥
गज से उतरे ईंट उठाई, पहुँचाई घर के भीतर ।
रुकी वही चलती असवारी, देखा सबने झुक झुक कर ॥
देख कृष्ण का कार्य सभी मिल, ई ट उठाने लगे तुरत ।
अत वृद्ध का आ जाता पर, नही कार्य का आता अंत ॥
वृद्ध कृष्ण के प्रति मन ही मन, कृतज्ञता ज्ञापित करता ।
कृष्ण ई ट जो नही उठाते, कौन उठा कर के धरता ॥

कथासार :

पुष्कर मुनि श्री सूत्र अतगड, सेवा का देता सदेश ।
हाथो की सेवा के सम्मुख, फीके है लाखों उपदेश ॥
जीभ हिलाने वाले नर भी, हाथ हिलाने लगे अगर ।
नही सुधरने वाले नर भी, जाये अपने आप सुधर ॥
दो हजार सैंतीस पजूषण, वर्षावास उदयपुर का ।
पचायती नोहरा भारी, खुश खुश मन मुनि पुष्कर का ॥

आधार श्री अन्तगड सूत्र तथा जैन महाभारत

8

दासी या स्वामिनी

तर्ज–ख्यालकी

म्हारी प्यारी बेट्यॉ, दासी बणसो या वणस्यो स्वामिनी...?
दासी कुण बणणो चावै, सै–कहै स्वामिनी वणसा ।
दासी बण कर जणै जणै री, क्यूँ दो बातां सुणस्यांजी ।।···१।।
हुस्या स्वामिनी हुकम चलास्यां, करस्यॉ मन री मोज ।
सुणां न मारा ताना तीखा, धरस्या वडो धिरोजजी ।।म्हांरी-२।।
पुरुषां रै चरणा री दास्या-वणै, जकी परणीजै ।
भोग वासना वाले मन सूँ-मालक नही बणीजै जी ।।म्हारी-३।।
श्रमण श्रमणियो रै चरणा में, सिर सम्राट झुकावै ।
त्यागी तीन लोकरा स्वामी, बाकी करम चुकावै जी ।।म्हांरी-४।।
मुनि पुष्कर पुरुषां री दासी, वणै मालकिन खोटी ।
पुरुष कमाकर घालै रोटी, झाल्याँ राखै चोटी जी ।।म्हारी-५।।

कृष्ण का चिन्तन :

तर्ज–राधेश्याम

नेमिनाथ भगवान पधारे, धर्म ध्यान के ठाट लगे ।
सोये हुए हृदय, मन, आत्मा, एक साथ मे सभी जगे ।।
कृष्ण सोचते सर्व विरति की, धर्म साधना बड़ी कठिन ।
जिस दिन मै कर पाऊँगा वह-धन्य बनेगा मेरा दिन ।।
मै असमर्थ स्वय को पाता, करूँ प्रेरणा औरो को ।
कन्याओ को माताओ को, छोटे राज किशोरो को ।।

दोहा

अपने ही परिवार से, करूं कार्य प्रारभ ।
ताकि लोग समझे नही, धर्म नीति को दभ ।।
उम्र योग्य जो लड़कियाँ, आती उनके पास ।
उनसे ऐसे पूछते, प्रश्न कृष्ण सोल्लास ।।
सुख पाओ बन स्वामिनी, दासी बनकर कष्ट ।
जो भी बनना चाहती, निर्णय कर लो स्पष्ट ।।
दासी बनने के लिए, कोई नही तैयार ।
बनना सबको स्वामिनी, उत्तार मिला उदार ।।

तर्ज--राधेश्याम

ऐसे समझा, समझा करके, दीक्षाएँ दिलवाई है ।
बहुत बड़ी यह धर्म-दलाली, समझो सत्य कमाई है ।।

एक रानी का विचार :

पुत्री मेरी केतुमजरी, साध्वी नही बने तो ठीक ।
रानी एक सोचती ऐसे, देती स्वय सुता को सीख ।।
दासी रानी बनने का जो, पूछे तो तुम कहना जी ।
बनना नही स्वामिनी मुझको, दासी बनकर रहना जी ।।
केतुमंजरी आई, पूछा, बोलो बेटी ! क्या बनना ।
बनना है मेरे को दासी, चकित कृष्ण मन सुन कहना ।।
इसकी नही बुद्धि है इसमे, इसकी मा का लगता हाथ ।
इसे उचित शिक्षा देने की, मुझे सोचनी होगी बात ।।

वीरक के साथ :

केतुमंजरी के लायक अब, जीवन-साथी खोजा जाय ।
लगन सहित जो लगे ढूँढने-लगता उसके हाथ उपाय ।।
वीरक कौलिक परम भक्त वह, दर्शन कर करता आहार ।
एक बार बरसात काल मे भूखा रहा महीने चार ।।

वैठा रहा सीढियों पर ही, कृष्ण नही निकले बाहर।
दर्शन विना किए कौलिक भी, खाए कैसे घर जाकर ॥

केतुमंजरी का कर दूं मैं, प्राणिग्रहण कौलिक के साथ।
पूछा उसे, कही क्या तुमने, करामात की की है बात ॥

वीरक का शौर्य :

दोहे

किरडकांटिये को कभी, मारा पत्थर मार।
वीर वहादुर मै बना, ले इसका आधार ॥

पहियो मे वहती हुई, वेगवती जलधार।
रोक रखा था पैर से, वना मूर सरदार ॥

भरा मक्खियो से घड़ा, मुँह पर रखकर हाथ।
उनको रोका देर तक, करामात की बात ॥

काम वीरता के लिए वीरक ! तुम हो वीर।
इन वातो की कृष्ण ने, खीची यह तस्वीर ॥

शौर्य का सम्मान

भरी सभा मे श्री माधव ने, वीरक का गुण-गान किया।
गौरवपूर्ण कार्य वतलाकर, स्थान दिया सम्मान दिया ॥

एक लाल फन वाले अहि को, भूमिशस्त्र से डाला मार।
इसके बचपन की घटना पर, आज सभी मिल करो विचार ॥

शकट चक्र से खुदी हुई उस, गगा मे बहता पानी।
पैर दाहिने से रोका है, शूरवीरता क्या छानी ॥

कलश नगर स्थित इक सेना को, रोका है दाँऐ कर से।
निकल न पाया कोई सैनिक, डरा न सेना के स्वर से ॥

इसको अपनी पुत्री देता, देता राजकीय सम्मान।
सम्मानित होता ही है नर, पुण्यवान गुणवान महान ॥

वीरक फूल गया :

वीरक केतुमंजरी को ले, आया है अपने घर पर।
लगा नाचने स्त्री के सम्मुख, नाचा करता ज्यो बन्दर ॥
हुक्म चलाती केतुमंजरी, करता वीरक काम सभी।
केतुमंजरी ने घर पर भी, किया नही था काम कभी ॥
किसी वस्तु की कमी नही थी, सुख मे जीवन बीत रहा।
वीरक कौलिक सोच रहा मै-जीवन बाजी जीत रहा ॥

पति का दायित्व :

दोहा

पूछ लिया श्री कृष्ण ने, वीरक क्या है हाल।
गले आपने ही बड़ा, डाल दिया जंजाल ॥
मेरी बेटी से तुझे, है क्या कोई कष्ट।
सेवा करने आपकी, समय न मिलता स्पष्ट ॥
केतुमजरी को न मै, करने देता काम।
पहुचाता मै हर तरह, उसे बहुत आराम ॥
वह है पुत्री आपकी, उसका रखना ध्यान।
मै तो मन से मानता, उसको आप समान ॥
सुनकर बोले कृष्ण तू, कैसा उसका नाथ।
भरता रहता हाजिरी, अजब गजब की बात ॥
सेवा तेरी वह करे, तू है उसका नाथ।
नही जानता तू अभी, क्या इतनी सी बात ॥
मेरी बेटी हो भले, तेरी तो वह नार।
सेवा लेने का तुझे, जन्मसिद्ध अधिकार ॥
यदि उससे सेवा न ली, तो होगा नुक्सान।
वीरक को बतला दिया, विधि के साथ विधान ॥
घर आ, तेवर वदल कर, वोला वीरक आज।
पडी पलग क्यो तोडती, कुछ तो होगी लाज ॥

वीरक और पत्नी :

तर्ज—चुपचाप

बैठी क्या हो ? उठो, काम करो घर वालाजी ।
बैठे बैठे मिलेगा न, पानी[1] का भी प्यालाजी ॥
काम तुम करो, काम मै नही करूंगीजी ।
कृष्णजी की बेटी, मै न आपसे डरूंगी जी ॥
पता नही पिता ने कैसे ब्याह कर डालाजी ··॥१॥
सुनते ही वीर ने चाटा एक मारा है ।
रोई केतुमंजरी न उसे पुचकारा है ॥
गाल पे निशान लगा अंगुलियो वालाजी·· ॥२॥
रोती रोती चली आई, मा के पास दौड़ कर ।
मां ने पुचकारा उसे, सारा काम छोड कर ॥
बोली क्या पिताजी ने भी वैर है निकाला जी ॥३॥
महलों में तू आने दे, मैं बात कर लूँगी सब ।
छोटी मोटी बातो से, दो कान भर दूँगी सब ॥
बात और साग मे भी पडता मसालाजी ॥४॥

कृष्ण की बात :

दोहा

हुई कृष्ण के सामने, बेटी की फरियाद ।
दासी बनने के लिए कहा, तुझे है याद ॥
यही लोक की रीति है, है यह लोक रिवाज ।
स्त्री पति की सेवा करे, करे न इसमें लाज ॥
बनना चाहो स्वामिनी, बनो अभी भी आप ।
दासी बनकर पुरुष की, क्यों भोगो दु ख पाप ॥
मां ने सिखलाई मुझे, कही-वही थी बात ।
क्षमा कीजिए भूल अब, जोड रही मैं हाथ ॥

---

१ चाय का, दूध का लस्सी का, शिकजी का, क्या ? पानी का भी नही मिलेगा ।

कथासार :

श्रमणी बनने की अनुमति ले, केतुमंजरी बनी सती ।
स्त्री दासी है, पुरुषदास है, दोनो की है बुरी गती ॥
त्याग मार्ग मे आने वाला, विजय भोग पर पा लेता ।
मुनि पुष्कर ने गाई महिमा, आज और भी गा लेता ॥
त्याग मार्ग की ओर बढो तुम, पुण्य प्रेरणा ग्रहण करो ।
जब भी सुनने का अवसर हो, श्रीजिनवाणी श्रवण करो ॥
वर्षावास उदयपुर मे नित, मै करता श्रुत आराधन ।
आश्विन मास ओलियो के दिन, तप जप करने के साधन ॥

आधार :—जैन टीका ग्रन्थ



9
असली तीर्थ यात्रा

तर्ज--कव्वाली

आतमा हो शुद्ध जिससे, तीर्थ-यात्रा है वही ।
स्नान से तन शुद्ध होता, पाप धुल सकता नही....।।
आतमा रूपी नदी तप त्याग संयम रूप जल ।
शील रूपी तट, तरंगे हो दया दिल मे सही....।।१।।
सत्य की धारा निरंतर वेग से बहती रहे ।
स्नान करने के लिए, आज्ञा प्रभु की है वही....।।२।।

पाप धो आये

तर्ज--प्यारे भारत में

तीरथ करने को, निकले पाचो भाई ।
पुरी द्वारका चलकर आये, कृष्ण, चरण मे शीश नवाये ।।
इच्छा नही छुपाई । तीरथ ।।१।।
हुआ बड़ संहार युद्ध मे, बढा पाप का भार युद्ध मे ।
मैं हूँ उत्तरदायी । तीरथ....।।२।।
हम पाँचो तीरथ कर आये, किए पाप हलके हो जाये ।
तीर्थ बड़े सुखदाई । तीरथ ।।३।।

कृष्ण का चिन्तन :

तर्ज--राधेश्याम

सोच रहे श्री कृष्ण स्नान से, धुल सकता है पाप नही ।
अभी इन्हे समझाने से मन, हो पायेगा साफ नही ।।

तर्ज—बना मन मंदिर आलीशान

सुना है तीर्थ महात्म्य महान, वहाँ पर आप करोगे स्नान....।
घर तजना क्या आसान ।।वहां १।।
मेरी यह तूँबी ले जाओ इसको दुगुने स्नान कराओ ।
बस रखना इसका ध्यान ।।वहाँ · २।।
घूम घुमा कर जब हो आना, गगाजल से यह भर लाना ।
है मेरा यह फरमान ।।वहां ···३।।

दोहा

घर बैठे ही हम यहाँ, पा लेगे परसाद ।
कार्य सफल हो आपका, यह लो आशीर्वाद ।।

तर्ज—राधेश्याम

तुँबी और विदा ले, करके चले युधिष्ठिर धर उत्साह ।
लेने को आये माधव से, मिली इन्हे वह नेक सलाह ।।

तीर्थो पर :

सभी प्रमुख तीर्थो मे घूमे, स्नान किया आचमन किया ।
पड़े और पुजारी जन को, इच्छापूर्वक दान दिया ।
मिट्टी से मल मल कर धोया, तुम्बी को करवाया स्नान ।।
जितना ध्यान स्वय का, रखते, रखते इस तुम्बी का ध्यान ।
वापिस लगे लौटने तुबी, गगाजल से भर लाये ।।
तुंवी सौपी हाल सुनाया, सारे तीरथ कर आये ।

मीठी नहीं हुई :

दोहे

तुँवी लेकर कृष्ण ने, टुकड़ा तोड़ा एक ।
रखा चखा मुँह मे, उसे, बोले अवसर देख ।।
कडवी यह कैसे रही, करके गंगास्नान ।
मीठी होना था इसे, इतने दिन दरम्यान ।।

करवाया होगा नही, इसे आपने स्नान ।
लोग पराये काम पर, कम देते है ध्यान ॥
एक बार हमने किया, जिस सरिता में स्नान ।
करवाया इसको वही, दो-दो बार सिनान ॥

कथासार :

तर्ज—राधेश्याम

तुँबी मीठी नही हुई तो, कैसे धुला आपका पाप ।
किसी तीर्थ के जल से धोलो, अंतरग कब होता साफ ॥
बाह्य शुद्धिका हेतु स्नान है, अतरग मे रहता पाप ।
तुबी से समझाने पर क्या, समझ नही पाओगे आप ॥
सभी सभासद पाचों पांडव, समझ गए है तीर्थ रहस्य ।
आतमा चित्त पवित्र बने वह, सच्चा मानों तीर्थ अवश्य ॥
चार तीर्थ है जिन शासन मे, भव सागर से तरने को ।
मुनि पुष्कर कहता है सबसे, श्री नवकार सुमरने को ॥
दक्षिण देश घूमकर आये, हम सब राजस्थानी संत ।
वर्षावास उदयपुर में कर, पुष्कर मन हर्षित अत्यंत ॥

आधार : वैदिक महाभारत



10

प्राणघाती की प्राण रक्षा

बचाइये :

तर्ज–प्यारे भारत में

मारने वाले के, आप बचाओ प्रान ।
मारने वाले के, बनना अगर महान ।।
इसने मारा उसने मारा, बढ़ता वैर वैर के द्वारा ।
अत नही व्यवधान ।।मारने··१।।
बचने का रास्ता बतलाना, क्रोध नही बिल्कुल भी लाना ।
दयाभाव दिल आन ।।मारने· ·२।।
महापुरुष ऐसा कर सकते, मार न सकते खुद मर सकते ।
गिनकर नियति विधान ।।मरने··· ३।।
ऊँचो का अनुकरण कीजिए, सुनकर भगवच्छरण लीजिए ।
सत्य स्वय भगवान ।।मरते ४।।

कौशाम्बी का वन :

तर्ज–राधेश्याम

दहन द्वारका का होने पर, दोनो बचकर निकल पडे ।
श्री बलराम कृष्ण मन ही मन, आकुल व्याकुल बने बडे ।।
कौशांबी के वन मे पहुँचे, प्यास लगी है जोरो से ।
दूभर बना वोलना, चलना-कहना-सुनना औरो से ।।
छोटे भाई की इस स्थिति से, चिन्तित बहुत बने बलराम ।
कष्ट सहन कर भो छोटो को, बडे दिया करते आराम ।।

छायादार वृक्ष के नीचे, बैठो यहां करो विश्राम।
जब तक मै जल लेकर आवूँ, यहीं पास में होगा गाम ॥
श्रात क्लान्त श्री कृष्ण पैर पर-पैर लगाकर लेट गये।
शक्ति नही थी इतनी तन में, इन्तजार में बैठ गये ॥

जरा कुमार का आगमन :

तर्ज-प्यारे भारत में

उधर आ निकला है, वन में जराकुमार..।
उधर आ निकला है, करता हुआ शिकार....।
व्याघ्रचर्म ओढे था तन पर, चिन्ता नही जरा भी मन पर।
साथ न ही परिवार ॥उधर...१॥
चमक रही कुछ वस्तु दूर पर, नजर गई है उसकी उस पर।
भ्रांति बनी साकार ॥उधर...२॥
वैठा हुआ हरिन है कोई, आँख चमकती उसकी वो ही।
दिया बाण झट मार ॥उधर....३॥

दोहे

थी न आँख वह हरिन की, था वह पद्म निशान।
हरि के दाये पैर का, प्रभावान गुणस्थान ॥
बाण पद्म में विध गया, था वह तीखा तीर।
तीर-पीर से हो गया, पीडित सकल शरीर ॥

कौन है रे ।

तर्ज—राधेश्याम

नीद खुली, खुलते ही बोले, किसने मारा मेरे तीर।
करते अगर प्रहार किसी पर, सावचेत कर देते वीर ॥
हो तुम कौन अकारण ही बस, मुझे बाण से मारा है।
वासुदेव ने सोए सोए, दुश्मन को ललकारा है ॥
सुनकर मानववाणी मन मे, चकराया है जरा कुमार।
पशु समझा था, निकला मानव, पश्चाताप हुआ अनमाप ॥

दोहे

एक वृक्ष की ओट मे, छिपकर बोला बोल ।
परिचय मेरा लीजिए, प्रेम भरा अनमोल ।।

जरा कुमार की जबानी :

तर्ज–हरिगीति

जनक श्री वसुदेव थे, माता जरा देवी भली ।
कृष्ण श्री बलराम भाई, प्रेम सुमनस की कली ।।

दोहे

ऐसा बोले एक दिन, नेमिनाथ भगवान ।
मेरे हाथो कृष्ण का, होना है अवसान ।।
यह सुनकर मैने लिया, उस दिन से वनवास ।
मैं न रहूँगा पास तो, होगा नही विनाश ।।
किसी पुरुष का भी यहां, मैने सुना न नाम ।
अपना परिचय आप दो, क्यों आये इस काम ।।

कृष्ण का उत्तर

तर्ज–प्यारे भारत में

बन्धु ! यहाँ आ जाओ, मैं ही हूँ वह भाई ।
व्यर्थ परिश्रम गया तुम्हारा, होनहार था यही हमारा ।
सारी बात सुनाई ।।बन्धु १।।
आया, रोया, पछताया, मन, बोले कृष्ण उसे दे सात्वन ।
करो न चिन्ता राई ।।बन्धु ''२।।

तर्ज–राधेश्याम

आयेगे जो अभी यहां बल, तो न तुझे वे छोड़ेगे ।
जा, जल्दी, भग, निकल, दूर बस, स्नेह नही हम तोडेगे ।।
पांडव मथुरा मे जा करके, समाचार कहना सारा ।
कौस्तुभ रत्न उन्हे दे देना, अर्जुन मित्र मुझे प्यारा ।।

समझा बुझा उसे भेजा है, चला गया है जरा कुमार।
परम उदार विचार कृष्ण के, जिसमें दया प्रेम का सार॥

कथासार :

मुनि पुष्कर ने बड़े प्रेम से, महापुरुष का यश गाया।
जिसने सुना, सुनाया, उसने-तीन भुवन में यश पाया॥

धर्म अमर गुरु अमर हमारे, रचना का स्वर अमर महान।
शहर उदयपुर मे चौमासा, पुष्कर अमर सुनाता ज्ञान॥

आधार : जैन महाभारत



11
जाजलि और तुलाधार

अभिमान न करे :

तर्ज–प्यारे भारत में

धर्मी होने का, करो नही अभिमान ।
धर्मी होने का, यो कहते भगवान..।
अगर धर्म पाया तो पाया, खाया तो क्यो नही पचाया ।
होकर के बलवान ।। धर्मी . १।।
किये धर्म का नाश करो मत, अहकार का सास भरो मत ।
धरो जरा सा ध्यान ।। धर्मी . २।।
किए धर्म को लिखो न वोलो, गुप्त खजाना कभी न खोलो ।
पढलो धर्म विधान ।। धर्मी–३।।
फल न आपका कोई लेगा, फल न किसी को कोई देगा ।
अपना अपना निशान ।।धर्मी–४।।
जाजलि मुनि को अहँ वड़ा था, तुलाधार का धर्म वड़ा था ।
सुनो सरस आख्यान ।।धर्मी–५।।

जाजलि का तप :

तर्ज–राधेश्याम

जाजलि मुनि ने मौन साधना वर्षो तक की स्थिर मन से ।
तन से मोह नही था उनको, मोह नही था जीवन से ।।
ध्यान समाधि तपस्या मे जव, मुनिजी की लग जाती थी ।
सर्दी गर्मी वर्षा की कुछ चिन्ता नही सताती थी ।।

चिड़ियो ने उनके बालों में, एक घोंसला डाल लिया।
हिले-डुले फिर भी न तपस्वी, मुनि ने बहुत कमाल किया ॥
बोले सिर ऊँचा करके वे, मैंने पाया धर्म महान।
इतने मे आवाज हुई फिर, इन्हें कराने को कुछ ध्यान ॥

तुलाधार बड़ा है :

हे जाजलि मुनि ! तुम से तो वह, तुलाधार भी ऊँचा है।
घर मे रहते हुए धर्म की, गहराई तक पहुँचा है ॥
सुनकर ईर्ष्या जागी मन में, चले तुरत काशी की ओर।
क्योकि तपस्या, योग साधना, जप मे थे न कही कमजोर ॥

तुलाधार के घर :

तर्ज—जादू नगरी से

मन मे भरके धर्मोल्लास, आये तुलाधार के पास।
काशी नगरी में आये है मुनि जाजलि . ॥
सौदा वह तोलता था, ग्राहक थे भारी।
फिर भी उठा है, की है, भक्ति उदारी।
मुनि के प्रति श्रद्धा है खास, मन है सत चरण का दास। काशी-१।
नाम बताया कारण आने का बताया।
सुनकर मुनि ने मन मे इचरज पाया।
तुमने किया तप अभ्यास, कैसे पाया ज्ञान प्रकाश। काशी-२।

तुलाधार का उत्तर :

तर्ज—चुप-चाप

तुलाधार बोला—मेरा जीवन तुला सा है।
आपकी शका का करूँ, अभी मै खुलासा है ॥
झूठ नही बोलता मै कम नही तोलता।
गुप्त भेद औरो का मै जानता न खोलता।
मन मे न आशा कोई, कोई न निराशा है ॥१॥

किसी से न राग-द्वेष मेरे समभाव है।
वास्तविक धर्म यही जीव का स्वभाव है।
विषयों की लालसा न भोगो की पिपासा है ।।२।।

निन्दा नही स्तुति नही करता मै कार्य की।
वाणी सत्य मानता हूँ अरिहंत आर्य की।
सर्व जीव हितकारी मीठी मित-भाषा है ..।।३।।

मन, वाणी, कर्म मे समानता दिखाता हूँ।
ठगना ठगाना किसी को भी न सिखाता हूँ।
लोगो ने बना रखा है धर्म को तमाशा है ।।४।।

आत्मयजी हूँ :

तर्ज–राधेश्याम

जाजलि मुनि बोले क्या तुम भी, कभी किया करते हो यज्ञ।
अथवा दुकानदारी करते, भरते पेट बने हो विज्ञ ।।
आत्मयजी हूँ क्रियाकाड में, रखता मै विश्वास नही।
यज्ञ भावना से होता है, जिसका कही विनाश नही ।।
वेदी, अग्नि, हवन, समिधा का, जिसमें कही नही भी स्थान।
सुनकर जाजलि मुनि के मन का, टूट गया झूठा अभिमान ।।

कथासार :

तुलाधार से धर्म श्रवण से, जाजलि मुनि को मिला यथार्थ।
मुनि पुष्कर सुन करके श्रोता, समझ गये होगे भावार्थ ।।
दो हजार पैंतीस साल का, कृष्णपक्ष शुभ कार्तिक मास।
जीवन की सत शिक्षाओ पर, पुष्कर मुनि करता विश्वास ।।

आधार :—महाभारत शांति पर्व

□ □

12

अति लोभ : एक दुर्दशा

सर्वनाश का कारण :

तर्ज–चुपचुप

अति लोभ करने से होता सर्वनाश है।
आपका न होगा चाहे मेरा यह विश्वास है... ।।

पेट फट जाया करता अति पीने खाने से।
गला दुख पाया करता अति गीत गाने से।
अति ऊँचा चढने से गिरने का त्रास है....।।१।।

अति पथ करने से आता है थकेला जी।
अति शिक्षा देने से न सुनता है चेला जी।
अति भक्ति चोरे लक्खन कहावत खास है. ।।२।।

अति की न इतिभीति करते ही जाओ जी।
अति कर अंत मे क्यों शोक दुख पाओ जी।
अति का भी देखो एक बडा इतिहास है ।।३।।

पुत्र नहीं .

तर्ज–राधेश्याम

राजा संजय बड़े राज्य के स्वामी थे पर पुत्र नही।
बिना पुत्र के जग का, घर का, सध भी सकता सूत्र नही ।।

पुत्रहीनता काटे की ज्यो, चुभती रहती थी मन मे।
बिना पुत्र के घर मे, कुल मे, सूनापन है जीवन मे ।।

बहुत उपाय किये पर कोई, नही कारगर हो पाया ।
इसे मान लो विधि की, चाहे किस्मत की कोई माया ।।
किसका दोष कौन बतलाये कौन मिटाये करे उपाय ।
नर निरुपाय प्रकृति के आगे, बेचारी स्त्री भी असहाय ।।

कैसा पुत्र चाहिए :

श्री नारद मुनि आये उनसे, नृप ने बात कही मन की ।
इच्छा पूर्ति अवश्य करोगे, महिमा है मुनि-दर्शन की ।।
कैसा पुत्र चाहिए बोलो ? नृप ने मन मे किया बिचार ।
मॉगू ऐसा पुत्र आज तक, जनमा न हो किसी के द्वार ।।
सुन्दर भी हो और स्वस्थ हो, अद्‌भुत और अलभ्य बड़ा ।
जिसके कफ, मल, मूत्र स्वर्णमय, हो व्यवहारू सभ्य बड़ा ।।
सुन विचित्र इच्छा राजा की, उठे मुस्करा मन ही मन ।
राजा सुत के साथ चाहता, अपने घर पर धन ही धन ।।
एवमस्तु कहकर नारद मुनि चले गये है अपने स्थान ।
सुत को जन्म दिया रानी ने टल सकती कब सत जबान ।।
नामकरण सस्कार कर दिया रखा सुवर्णाष्ठीवी नाम ।
सुत के कफ, मल-मूत्र स्वर्णमय बनते रहते आठो याम ।।

सोना ही सोना :

तर्ज—जादू नगरी से

मन मे नही खुशी का पार, शोभा फैल रही ससार ।
घर मे देखो तो सोना ही सोना हो गया ।।
छत पर भी सोना है, ऑगन मे सोना ।
सोने का पलग भी तो सोने का होना ।
बन गई सोने की दीवार, करते सोने से सब प्यार. ।।घर-१।।
सोने के थाल सारे सोने की कटोरियाँ ।
सोने से भर गई है सारी तिजोरियाँ ।
आता देखने ससार, होता इचरज बिना शुमार... ।।घर-२।।

चोर लग गये :

तर्ज–राधेश्याम

चोरो के कानो में आई, विशेषता वाली बाते ।
सोचा उनने नही हमें अब, करनी है काली राते ।।
जो ले आये इस लड़के को, सोना ही सोना पाये ।
सोयेगे फिर नीद शाति की, अब तक हम सो ना पाये ।।
सभ्य पुरुष बन राजमहल मे, उसे देखने को आये ।
जो भी सुना, आँख से देखा, मन विश्वास जमा पाये ।।
लड़के का अपहरण कर लिया, महलो के उस कोने से ।
इनको सुत से काम नही है, काम इन्हे है सोने से ।।

दोहे

सोचा सुत के उदर मे, भरा पडा है स्वर्ण ।
इसीलिए मल-मूत्र, कफ, बनते रहते स्वर्ण ।।
चीरे इसका पेट तो, सोना होगा प्राप्त ।
वह सोना अपने लिए, होगा भी पर्याप्त ।।

तर्ज–राधेश्याम

पेट चीर कर देखा उसमे, नही स्वर्ण का पाया अश ।
हुआ दस्युओ को दुख भारी, हुआ व्यर्थ मे सुत का ध्वस ।।

कथासार :

संजय ने सुनकर दुख पाया, सोने का सुत मरने से ।
'पुष्कर' दुनिया दुख पाती है, अधिक लोभ के करने से ।।
लोभ क्रोध का त्याग श्रेष्ठ है, संतों का उपदेश यही ।
दो हजार सैंतीस कार्तिकी दशमी का दिन आज सही ।।

आधार . महाभारत. शातिपर्व

□□

13

छह गुरु

सीखते चलो

तर्ज–कव्वाली

श्रवण कर जो ग्रहण करता, शांति मिलती है उसे ..।
दे रहे उपदेश जो भी, धारते उसको प्रथम।
आतमा उससे निखरता ।।शाति....१।।
मानते उपकार जिनसे-ली, सुनी शिक्षा सही।
मन न गुरु गुण को विसरता ।।शाति २।।
सीखने वाला सही कुछ, सरलता से सीखता।
जो उडाई में उतरता ।।शाति ३।।
जो मिले, जिससे मिले, जब भी मिले, ले प्रेम से।
ज्ञान का भडार भरता ।।शाति ४।।
सूक्ष्मता से देखना ही, है बड़ा अध्ययन जी।
प्राप्त कर लेता अमरता ।।शाति....५।।

गुरु से प्रश्न :

तर्ज–राधेश्याम

भूप ययाति पूछता नम कर, बोध्य सुगुरु से प्रश्न नया।
इतने शात आप हो कैसे ?, बतलाओ कुछ करो दया।।
मैं देता उपदेश नही, नित-ग्रहण किया करता उपदेश।
मुख पर शाति विराजित उसका, समझो सत्य रहस्य विशेष।।

किससे क्या उपदेश लिया वह, स्पष्ट रीति से समझाओ ।
गुरु बोले—छह गुरु है मेरे, गिनो नाम, गिन सुख पाओ ।।

गुरुओं के नाम :

दोहे

पहला गुरु है पिगला, कुरर दूसरा जान ।
साप और सारंग का, फिर अनुक्रम से स्थान ।।
पंचम गुरु जो बाण का, करता है निर्माण ।
क्वाँरी कन्या गुरु छठा, गुण रत्नों की खान ।।

किससे क्या सीखा :

तर्ज--राधेश्याम

१ पिंगला

आशा प्रबल छलावा जग को, भटकाती रहती दिनरात ।
लिया पिगला का अवलबन, धार्मिक वृत्ति बढी साक्षात् ।।

२ कुरर पक्षी

तर्ज--कव्वाली

जा रहा था कुरर पक्षी, मांस का टुकडा लिए ।
पक्षियो ने किया पीछा, मॉस पाने के लिए ।।
वह न देना चाहता था ।।मास पाने १।।
घिर गया पक्षी कुरर, वे बहुत थे, यह एक था ।
टिक न पाया, लड न पाया ।।मास पाने ···२।।
मास तजकर सास सुख की, कुरर ने ली बैठकर ।
छोड़ कर सारे गए वे ।।मास पाने· ३।।

तर्ज--राधेश्याम

देख कुरर पक्षी की घटना, मैने शिक्षा अपनाई ।
दुख का मूल परिग्रह ही है, त्याग इसी का सुखदायी ।।

३. सांप

बिल न बनाता साप स्वय का, मैंने ही गृह त्याग किया ।
खट पट बड़ी बनाने मे घर, तजकर धर वैराग लिया ।।

आसमान के नीचे रहता, आश्रय देता मुझे गगन ।
चिन्ता भय न सताते मन को, मन रहता है छगन-मगन ।।

४. सारग :

किसी जीव से वैर न करता, देखो ज्यो पक्षी सारग ।
उछ वृत्ति मैने अपनाई, सीखा पूर्ण अहिसक ढग ।।

५, बाण वाले से

बाण बनाने वाले नर को, हुआ सवारी का न खयाल ।
चाहे उसके आगे होकर, निकल पड़े कोई भूपाल ।।

उससे मैने सीखा अपने, कार्यो मे रहना तल्लीन ।
बिना लीनता ज्ञान ध्यान तप, जप सयम गुण सारविहीन ।।

६. क्वाॅरी कन्या से

धान कूटते हुए निहारा, कन्या एक कुवाॅरी को ।।
बजती बहुत चूडियाॅ उसकी, पता चला बेचारी को ।।

रुग्ण पिता की नीद खुली है, पीड़ा उनको हुई परम ।
रखी चूडियाँ खोल हाथ से, कन्या का था यही धरम ।।

शब्द बंद हो गया हाथ मे, एक एक ही चूड़ी थी ।
मैने सोचा रहूँ अकेला, शिक्षा कितनी रूड़ी थी ।।
कोई नही साथ मे होगा, होगा कलह न होगा शब्द ।
बिना पवन के झोके कैसे, शात सरोवर बनता क्षुब्ध ।।

कथासार :

छह गुरवो की छह शिक्षा से, शाति मिली मेरे मन को ।
जो न करे उपदेश ग्रहण तो सुखी करे क्या जीवन को ।।

कथानको से 'मुनि पुष्कर' ने कितना गहरा ज्ञान लिया ।
शाति उसी ने पाई जिसने, सुने हुए पर ध्यान दिया ।।

दोहा

आई शुभ श्रुतपचमी, देने को सदेश ।
पुष्कर करते जाइये, श्रुत अभ्यास हमेश ।।

आधार :—महाभारत शाति पर्व

14
भाग्य की बात

सब पीछे है :

तर्ज–प्यारे भारत में

भाग्य के पीछे है, विद्या, बल, पुरुषार्थ ।
भाग्य के नीचे है, विद्या, बल, पुरुषार्थ....।।
महनत मिट्टी मे मिल जाती, बिना भाग्य विद्या कब आती ।
कहने का भावार्थ ।। भाग्य १।।
चाहे जितने दौड़ो भागो, घर का मोह एकदम त्यागो ।
सिद्ध न होता स्वार्थ ।। भाग्य....२।।
कितना क्यो न दिमाग घुमाओ, श्रमपूर्वक धनराशि कमाओ ।
कब सधता परमार्थ ।। भाग्य....३।।
जब तकदीर साथ दे अपना, सत्य-सिद्ध हो जाता सपना ।
विजयी बनता पार्थ ।। भाग्य... ४।।
भाग्य न दिखता श्रम दिखता है, भाग्य न बिकता श्रम बिकता है ।
बहुता बड़ा गूढार्थ ।। भाग्य. ५।।

मंकी की कथा :

तर्ज–राधेश्याम

मंकी ने की कोशिश भारी, बना न बेचारा धनवान ।
बहुत किए व्यापार और श्रम, बदल बदल कर स्थान दुकान ।।
हुई हानि ही हानि निरतर, लाभ न मिला कही पर भी ।
तजा नही पुरुषार्थ शून्य ही, शेष बचा करता फिर भी ।।

दो बछड़े :

आखिर बचे खुचे धन से दो, बछडे लिए खरीद नये ।
जो न अभी तक कभी जुए मे, गाड़ी मे थे जुते हुए ॥
कर कृषि कर्म जीविकोपार्जन, करते अन्य करूँगा मैं ।
धन न लिखा है किस्मत मे पर, भूखा तो न मरूँगा मै ॥
धरती माता सबको देती, देगी उनके साथ मुझे ।
धधा करने वाली अब से, नही सुहाती बात मुझे ॥
जूआ कधो पर रखते ही, गर्दन लगे घुमाने भी ।
मकी प्यार दिखाते कहता, पडते आर चुभाने भी ॥
बछडो ने सोचो कधो पर, रखा गया है जुआ नया ।
काम हमे करना ही होगा, कौन करेगा यहाँ दया ॥
करे क्यो न उत्साह सहित फिर, लगे दौडने अब बछड़े ।
मानो मकी पडक न पाता कितने जोर सहित पकडे ॥
मकी लगा सोचने पाई, अच्छे बछडो की जोड़ी ।
इनसे खेती किया करूँगा, ज्यादा कभी कभी थोड़ी ॥
गाडी मे भी जोतूगा मै ढोऊँगा मंडी तक माल ।
खूब कमाऊँगा धन इनसे, जीऊँगा सुख से सौ साल ॥

ऊँट ले भागा :

ऊट एक रास्ते मे बैठा, बछडे दौडे जाते थे ।
मानो बधी हुई रस्सी को, बल से तोडे जाते थे ॥

दोहा

ऊट आ गया बीच मे, इधर-उधर ये बैल ।
जूए की टक्कर लगी, उठा ऊँट हँस-खेल ॥
लटक गए है बैल अब, भाग रहा है ऊट ।
नये बैल जुए सहित, मानो लाया लूट ॥
पीछे मंकी भागता, चिल्लाता कर जोर ।
पता नही कुछ भी लगा, भगा ऊँट किस ओर ॥

आया अब घर लौटकर, मंकी बना निराश ।
मन की सब मन में रही, बचा न कुछ भी पास ।।
धन की तृष्णा त्याग कर, धर बैठा संतोष ।
तृष्णा से ही उपजते, जग के जितने दोष ।।
श्रम करने पर भी नही, दिया भाग्य ने साथ ।
करो भरोसा भाग्य पर, सुन मंकी की बात ।।
शाति पर्व से सुन लिखा, शिक्षाप्रद आख्यान ।
मुनि पुष्कर जीवन नही, केवल भाग्य प्रधान ।।
मिल करके चलते यहा, भाग्य और पुरुषार्थ ।
काम न चलता एक से, कहने को भावार्थ ।।
दो हजार सैंतीस का, कार्तिक उज्जवल पक्ष ।
पुष्कर आप बताइये, धार्मिक उज्वल लक्ष ।।

आधार : महाभारत शातिपर्व



15

आत्मा को देखो

तर्ज–प्यारे भारत में

देखो आत्मा को, देखो नही शरीर ।
देखो आत्मा को, यो कहते महावीर ।।
जो कुछ है सो है आत्मा मे, आत्मा के गुण परमात्मा मे ।
खीचो नही लकीर ।।देखो १।।
रूप न देखो, रग न देखो, टेढा-मेढा अग न देखो ।
देखो गुण - गभीर ।।देखो····२।।
चमडा यहाँ चमार परखते, ज्ञानी आत्मा देख हरखते ।
पाते भव जल तीर ।।देखो· ।।
आत्मा का कोई नाम नही है, आत्मा का कोई काम नही है ।
कर्म-देह का सीर ।।देखो ४।।
एक, अखड, अमर, ज्योतिमर्य, अभय, निरामय, सिद्धशिलाश्रय ।
नमते पीर - फकीर ।।देखो ·· ५।।

अष्टावक्र की बात :

तर्ज –राधेश्याम

बारह वर्षो की वय मे ही, अष्टावक्र बने ज्ञानी ।
श्वेत केतु ऋषि उद्दालक सुत, समवयस्क कुछ अभिमानी ।।
उद्दालक की सुता सुजाता, इसके सुत थे अष्टावक्र ।
पीहर मे ही यह रहती थी, देख भाग्य का उल्टा चक्र ।।

नाना को ही पिता समझते, रहते पढते इनके पास ।
पूज्य पिता है कौन ? कहां है ? इसका नही इन्हें आभास ॥
बैठे अष्टावक्र एक दिन, गोदी मे निज नाना के ।
आए श्वेतकेतु यो बोले, बैठे कैसे तुम आके ॥
यहाँ बैठने का अधिकारी मै हूँ, तुम हो कभी नही ।
हाथ पकड कर खडा कर दिया, लड़ते-भिडते सभी नही ॥
जाओ अपने पूज्य पिता की, गोदी में जाकर बैठो ।
यहाँ बैठने के खातिर तुम, श्वेतकेतु से मत ऐंठो ॥
ऐसे कहकर श्वेतकेतु जा, बैठा पूज्य पिता की गोद ।
ऋषि उद्दालक समझ रहे थे, इसे बालकों का आमोद ॥

श्न उत्तार :

दोहे

क्या न आप मेरे पिता, लगा पूछने बाल ।
कहा गए मेरे पिता, फिर है एक सवाल ॥
श्वेत केतु कहने लगा, पूछो मां के पास ।
सुनकर अष्टावक्र का, मन हो गया उदास ॥
उठकर अष्टावक्र अब, आया मां के पास ।
माँ ने पूछा क्यो बता ? बेटे ! आज उदास ॥
कहाँ गए मेरे पिता, क्या है उनका नाम ।
कब से हम रहते यहाँ, कहाँ हमारा गाम ॥

तर्ज–राधेश्याम

एक शिष्य उद्दालक ऋषि के, नाम कडोह विनीत भले ।
उनसे मेरा व्याह कर दिया, अर्थार्जन को निकल गए ॥
गए जनक की राजसभा में, किया वहां शास्त्रार्थ बड़ा ।
बन्दी द्विज से बने पराजित, कष्ट उठाना उन्हें पडा ॥

हारे हुए बने वे बन्दी, कहते कहते मां रोई।
तू उस समय पेट में ही था, और नही कारण कोई॥
धीरज बधवाया माता को, घर से निकला अष्टावक्र।
दधि को बिना मथे ही कैसे, प्राप्त किया जा सकता तक्र।

राजसभा में प्रवेश :

दोहे

अन्दर जाने दो मुझे, बोले अष्टावक्र।
द्वारपाल सुन हट गया, देख तेज गुण-शक्र॥
बढ़कर अष्टावक्र ने, अन्दर किया प्रवेश।
ऋषियो मुनियो का हुआ स्वागत क्या न हमेश॥

तर्ज—हरिगीतिका

खिल खिलाकर हँस पडे, सारे सभासद देखकर।
अंग टेढे और मेढे हो गए सारे बिखर॥
जब रुके हँसकर सभी ऋषि आप हँसते जोर से।
आप भी क्यों हँस रहे हो, पूछते जन जोर दे॥

क्यो हँसे थे :

तर्ज—चुपचाप

आप क्यो हँसे थे, पहले बतलाओ जी।
बाद मे बताऊँगा मैं बैठ जाओ जी.॥
अग टेढे-मेढे देख हँसे हम सब लोग।
आप क्यो हँसे थे बोलो, बाल ऋषिराज अब।
हम है गृहस्थ, हमें आप न दबाओ जी....॥१॥
एक भी न ज्ञानी तुम सारे ही चमार हो।
चमड़े के पारखी हो, मूर्ख सरदार हो।
मेरे जैसे ऋषि को भी और न हँसाओ जी.. ॥२॥

शास्त्रार्थ के लिए :

तर्ज--राधेश्याम

ऋषि से क्षमा याचना करता, उठकर जनक सिहासन से।
कैसे हुआ आगमन बोलो, जानेगे हम भासन से ।।

बन्दी से विद्वान पुरुप से, करना है शास्त्रार्थ मुझे ।
जो भी सीखा समझा उसका, पाना है परमार्थ मुझे ।।

बन्दी से ? हाँ ! बन्दी से ही, यह बच्चों का खेल नही ।
बन्दी और बाल ऋषि का हम, बिठला सकते मेल नही ।।

राजन ! मत सकोच कीजिए, आप दीजिए अब आदेश ।
टिक न सकोगे, आप,--समझते देना है कोई उपदेश ।।

तपस्वियो की आयु ज्ञान है, नापो दिन न महीनो से ।
जीभ बन्द कर दूँगा उसकी, भिडा सदा गुणहीनो से ।।

अष्टावक्र की जीत .

दोहे

बन्दी अष्टावक्र का, हुआ बड़ा शास्त्रार्थ ।
शास्त्रार्थो का समझते, विद्वज्जन भावार्थ ।।
बन्दी दे पाया नही, उत्तर युक्ति-प्रधान ।
हार मानली आपकी, देख अलौकिक ज्ञान ।।

तर्ज--राधेश्याम

जनक कडोह मुक्त हो गये मिले पुत्र से बने प्रसन्न ।
हार-जीत पर किया गया था, पक्षो द्वारा यही वचन्न ।।

कथासार :

दोहे

समझे सभी शरीर पर, दृष्टि डालना भूल ।
आत्मा को ही देखना, जो है सुख का मूल ।।

मुनि 'पुष्कर' देने लगा, प्रवचन आत्म-प्रधान ।
जिसकी कथा कहानियाँ, देती ऊँचा ज्ञान ।।

हम व्यक्तित्व कृतित्व का, बिठला देते मेल ।
दिखता है प्रत्यक्ष जव, हमे तिलो में तेल ।।

दो हजार सैंतीस का, उत्तम कार्तिक मास ।
रहा उदयपुर शहर का, उत्तम वर्षावास ।।

आधार :—महाभारत वनपर्व



16

गलत निर्णय

तर्ज–चुप-चाप

पक्षपात वाली बात कभी मत करोजी।
झूठे पक्षवालों का हुंकारा मत भरोजी....।
आप पर छोड़ देते लोग विश्वास कर।
आप छोड़ देने उन्हें पूरा ही विनाश कर।
पेट माँगे उतना ही चारा आप चरोजी ..॥१॥
तोलो न्याय तुला पर पलड़े समान हो।
तोलने के लिए बैठे आप भगवान हो।
पंचों में परमेश्वर वाली कथा समरोजी...॥२॥
अपना न स्वार्थ, स्वार्थ देखिए किसी का भी।
पक्षपात लीजिए न आप तो किसी का भी।
धमकियां दिखाये तो भी कभी मत डरोजी....॥३॥
कथा उपरिचर वाली बड़े ज्ञानवाली है।
ग्रन्थो में से इसे मैंने ढूँढ के निकाली है।
पुष्कर मुनिवर भव पार तरोजी.. .॥४॥

एक विवाद :

दोहा

उड सकते आकाश में, नृपति उपरिचर आप।
नारायण की भक्ति का, था वह पुण्य प्रताप॥
सेना उडती साथ मे, पथ बनता आकाश।
सुर नर करते एक सा, राजा का विश्वास॥

देवों मुनियो मे छिडा, भारी एक विवाद ।
पशु बलि हो अथवा नही, यज्ञो मे साल्हाद ।।
कोई ऋषि करता नही, अज का वकरा अर्थ ।
पशु का होम अवश्य हो, कहते देव समर्थ ।।
नृपति उपरिचर जो करे, हो वह निर्णय मान्य ।
तटस्थता का ही यहां, रहता है प्राधान्य ।।
पहुँचे सब ऋषि देवता, करवाने को न्याय ।
लिए न्याय के कीजिए, जो उपलब्ध उपाय ।।
हम दोनो के बीच में, आप बनो मध्यस्थ ।
दोनो पक्षो के लिए, एक आप विश्वस्त ।।
असमजस मे पड़ गया, नृपति उपरिचर आप ।
इधर देव, ऋषि गण इधर, किसके रहू खिलाफ ।।
ऋषि बोले क्या उचित है, पशुओ का बलिदान ।
यज्ञ हमारा चाहिए, निर्मल दयाप्रधान ।।
पशु बलि होनी चाहिए, देवो का यह पक्ष !
अज का बकरा अर्थ है, देखो नृप ! प्रत्यक्ष ।।

झूठा निर्णय :

तर्ज--चुपचाप

पक्षपात कर दिया जी पक्षपात कर दिया ।
देवता की बातो मे हुंकारा भर दिया..।।

देवता प्रसन्न होगे देगे ऋद्धि सिद्धि सब ।
देवता के बिना होती कुल में समृद्धि कब ।
खाली नही जाता देवताओ ने जो वर दिया ..।।१।।
सुनते ही ऋषि सब हो गये चकित मन ।
बोलते हे ऋषि सब अब तो कुपित बन ।
पतित बनोगे नृप पत्थर जो धर दिया....।।२।।

गिरने लगा है झट भूपति आकाश से ।
टिके थे आकाश में वे सत्य के विश्वास से ।
चारों ओर निराशा का वातावरण घिर गया....।।३।।
देवताओं ! आओ मुझे गिरने से बचाओ जी ।
धँस रहा हूँ भूमि में लो ऊँचा तो उठाओ जी ।
हुई है आकाशवाणी ऐसा सच्चा स्वर दिया ...।।४।।

झूठ का फल :

तुझे बचाने के लिए, कोई नही समर्थ ।
क्योकि किया तुमने अभी, अज का उलटा अर्थ ।।
पक्षपात से हो गया, कृत-पुण्यों का नाश ।
सुनकर सुर नर उपरिचर, सारे हुए हताश ।।
"मुनि पुष्कर" क्यों बोलना, जान-बूझकर झूठ ।
झूठ बोलने से सभी, सुकृत जाते खूट ।।
सुनो उपरिचर की कथा, देती सच्चा ज्ञान ।
निर्णय गलत न दीजिए, रखिए इतना ध्यान ।।
दो हजार सैंतीस का, उत्तम मिगसर मास ।
सदा सचाई पर करो, पुष्कर मन विश्वास ।।

आधार : महाभारत शांतिपर्व



17
चोरी का दंड

तर्ज—प्यारे भारत में

भोगना पड़ता है, हुई भूल का दंड।
भोगना पड़ता है, करिये नही घमण्ड... ॥
चाहे छिद्र क्यों न हो छोटा, नाव डुबोने को वह मोटा ।
नियम हमेश अखण्ड ॥ भोगना....१॥
फिसले बिना न गिरता कोई, संकट बिना न घिरता कोई ।
पाप हमेश प्रचण्ड ॥ भोगना . २॥
विष की घूँट प्राण ले जाती, छूट न छोटी भी दी जाती ।
त्याज्य सदा पाखण्ड ॥ भोगना... ३॥
शख-लिखित की कथा सुनाऊँ, चोरी का फल-भोग बताऊँ ।
सत्य धर्म मार्तण्ड ॥ भोगना ..४॥

शंख और लिखित

तर्ज--राधेश्याम

शख तपस्वी का आश्रम था, नदी बाहुदा के तट पर ।
मानो सुन्दर हुई छपाई, नवनिर्मित उज्वल पट पर ॥
चारों ओर बगीचे में थे, रस वाले फल के तरुवर ।
बेले पौधे सुन्दर-सुन्दर, पुष्प सुगन्धित अति मनहर ॥
शख तपस्वी के तप द्वारा, वातावरण बनाया शात ।
शात और एकात स्थान मे, चित्त नही होता दिग्भ्रात ॥

शंखाश्रम से बहुत दूर था, लिखित तपस्वी का आश्रम ।
दोनों संत तपस्वी भाई, निश्चित रखते तप-जप-क्रम ।।

मिलने के लिए :

शंख तपस्वी से मिलने को, लिखित तपस्वी आये है ।
मिलने वाले संतो ने ही, मन के भेद मिटाये है ।।
शंख नही थे तब आश्रम मे, लिखित प्रतीक्षा करते है ।
आश्रम की सुषमा से अपने, नैन और मन भरते है ।।
भूख लगी पर भाई जी के, आने पर ही खायेंगे ।
मिलने को आये है तो अब, मिल करके ही जायेगे ।।
बहुत देर हो गई, न आये, तोड़े फल बैठे खाने ।
अपने भाई का था आश्रम, क्यो खाये छाने-माने ।।

मिल गये

दोहे

इतने मे आते हुए, दिखे सामने शख ।
खडे हुए उठकर लिखित, सरल मना नि शंक ।।
मिले परस्पर प्रेम से, पूछी सुख-दुख बात ।
पड़े फलों पर हो गया, अग्रज का दृग्पात ।।
भाई ! ये फल आपको, हुए कहाँ से प्राप्त ।
तोड़े वृक्षो से अभी, खाने को पर्याप्त ।।
तोड़े क्यो पूछे बिना ? आप नही थे भ्रात ! ।
फिर मै किससे पूछता ? है यह अनुचित बात ।।
पाप कौन सा कर लिया, मधुर और रसदार ।
भूख मिटाने के लिए तोड़ लिए फल चार ।।

भूल का भान

तर्ज—राधेश्याम

पूछे बिना वस्तु का लेना, होता क्या न अदत्तादान ।
ऋषि हो तुम तो, सदाचार का, और नियम का होगा ज्ञान ।।

अन्य पुरुष की वस्तु न ली है, ली है मेरे भाई की ।
वे भी फल खाने के खातिर, इसमे नही बुराई की ॥
भूल रहे हो लिखित, साधु के होते क्या कोई नाते ।
उसके लिए पराये सारे, हम सन्यासी कहलाते ॥

दण्ड राजा देगा :

अच्छा, भूल हो गयी, लो अब, आप बड़े हो दे दो दण्ड ।
दण्ड नही मै दे सकता, दे सकता राजा दड प्रचण्ड ॥
जाओ राजसभा मे जाकर, दण्ड याचना आप करो ।
जो भी भूल हुई हाथो से, प्रायश्चित्त ले साफ करो ॥
सुनकर लिखित ऋषीश्वर उठकर, राजसभा मे आये है ।
नृप सुद्यु्म्न तथा लोगों ने, उठकर शीश झुकाये है ॥

लिखित और राजा ·

दोहे

अपराधी के रूप मे, मैं आया हू आज ।
कहिए क्या अघटित हुआ, बोल उठे महाराज ॥
अनुपस्थिति मे शख के, खाए कुछ फल तोड़ ।
दण्ड स्तेय का मै यहा, लेने आया दौड ॥
देख सरलता सत की, हुए सभी अभिभूत ।
साबित करने पाप को, मागे कौन सबूत ॥
खा लेना फल तोडकर, खास नही अपराध ।
तरु को अगर उखाडते, तो सुनते फरियाद ॥
जन साधारण के लिए, होते ऋषि आदर्श ।
वे न संयमी जो रहे, (तो) क्या होगा निष्कर्ष ॥
दे सकता हूँ मै क्षमा, है मुझको अधिकार ।
मै दूँ केवल दण्ड ही, ऐसा नही विचार ॥
मुझे दण्ड ही चाहिए, वह भी अधिक कठोर ।
मुझे दण्ड दो, दण्ड दो, ऋषि वोले दे जोर ॥

हाथ काटने का दिया, भूपति ने आदेश ।
है यह दण्ड कठोरतम, देते नही हमेश ।।
हाथ कटे ऋषि उठ चले, बन करके संतुष्ट ।
सयम जीवन को किया, इस विधि से परिपुष्ट ।।

हाथ आ गए :

हाथ जोड़ने का किया, प्रात काल प्रयास ।
ईश प्रार्थना के समय, यही इन्हे अभ्यास ।।
प्रकट हो गये फिर तुरत, कमल पत्र सम हाथ ।
चकित होगए ऋषि लिखित, देख अनोखी बात ।।

कथासार :

शख तपस्वी के सन्मुख यह, चमत्कार की की है बात ।
कल कटवाये हाथ आज वे, फिर से प्राप्त हो गये हाथ ।।
अल्प पाप का फल थोडे ही, समय भोगना पड़ता है ।
ज्यादा चोट नही लगती जब, चलता नर आखड़ता है ।।
"पुष्कर" सुनो महाभारत का, नीति ज्ञान कितना ऊँचा ।
ज्ञान उसी ने पाया जो नर, गहराई मे जा पहुँचा ।।
तारक गुरु की दया दृष्टि से, पुष्कर ने यह पाया स्थान ।
स्थान-स्थान पर प्रवचन देकर, जन-जन को करता आह्वान ।।

आधार—महाभारत : शान्तिपर्व



18
विनय की विशेषता

सामना नहीं कीजिए :

तर्ज–चुपचाप

वेग आये सामने तो, आप झुक जाइए।
वेग आये सामने तो, आप रुक जाइये....।।

झुकने से कोई नर छोटा नही होता है।
रुकने से कोई नर छोटा नही होता है।
झुकने का, रुकने का फायदा उठाइये..।।१।।
आता वेग ले भी जाता मूल को उखाड कर।
आता वेग छोड जाता मूल को पछाड़ कर।
शक्तियो से भिड़ने मे शक्ति न गँवाइये..।।२।।
सरिता के वेग आगे बेंत झुक जाते है।
भीष्म धर्मराज को दृष्टान्त यह सुनाते हैं।
पुष्कर मुनि गाये कथा, सुनिए सुनाइये ।।३।।

सागर की आवाज

तर्ज–राधेश्याम

विनयी सदा खड़ा रहता है, कोई सकता नही उखाड़।
विनयी शिष्य नही खाता है, भरी सभा मे बुरी लताड़।।

दोहा

विनयी बन करके कलश, भर सकता है पेट।
खेल न पाता पारधी, झुके विना आखेट।।

तर्ज--राधेश्याम

वेत्रवती से सरितापति ने, रूखे स्वर में बात कही।
मेरे लिए आज तक कोई, लाई हो तुम भेंट नही ।।
अन्य सभी नदियां जब आती, लाती नये नये उपहार।
अगर वे न लाती तो कैसे, भरता यह मेरा भंडार ।।
तेरा खाली हाथों आना, शोभा देता नही तुझे।
तुझे शर्म आती न जरा भी, शर्म सताती बहुत मुझे

वेत्रवती का विनय .

वेत्रवती ने कहा विनय से, स्वामिन्! एक सुनो अरदास।
लावूं भेट, करूँ अर्पण मै, यदि कुछ हो भी मेरे पास ।।
मेरी यही विवशता मानो, ला सकती उपहार नही।
मेरा कोई स्वार्थ न इसमें,-- मन में बुरा विचार नहीं ।।

तर्ज--ख्याल की

मैं लावूं कहा से ? मेरे रास्ते मे केवल बेत है...।
मैं जब वेग दिखाती आती, बेत सभी झुक जाते ।।
वेग उतर जाने पर सारे, खडे शीघ्र हो जाते जी.. ।।१।।
हाथ जोडकर जो झुक जाते, वे न उखाडे जाते।
होते खडे सामने वेही, जाते खोखा खाते जी....।।२।।
तिनका एक बहाकर लाना, काम हो गया भारी।
भेट कहाँ से करूँ आपको, यह मेरी लाचारी जी ..।।३।।
अब सरितापति मौन हो गया, सुन सरिता का उत्तर।
मुनि 'पुष्कर' बड़ा बलशाली, विनयधर्म का सूतर जी....।।४।।

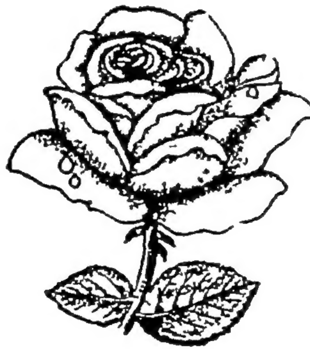
कथासार :

तर्ज--राधेश्याम

भीष्म पितामह ने बतलाया, नम जाने मे गुण भारी।
नमो, खमो जड सहित जमो फिर, रमो धर्म मे नर-नारी ।।

पुष्कर मुनि विरचित हितकारी भव्य प्रसंग सुनो धर ध्यान ।
जो न ध्यान देता है अपना, उसका कैसे हो कल्याण ।।
दो हजार सैंतीस साल का, मिगसर मास सुहाया है ।
पाकर अवसर पुष्कर मुनिवर यह रचना कर पाया है ।।

आधार—वैदिक महाभारत



प्रशस्ति

पुण्य शाली परम्परा :

अमरसिंह आचार्य प्रवर थे, मारवाड़ के पूज्य महान ।
जिनकी महिमा जग विश्रुत है, सुर सेवित संस्तुत गुणवान ।।

ज्योतिर्धर आचार्य प्रवर श्री तुलसीदास द्वितीय महान ।
उनके पटधर श्रुतधर सुखकर, पूज्य तीसरे वने सुजान ।।

ख्यातिप्राप्त आचार्य जीतमल, शासन के उज्वल नक्षत्र ।
अति पवित्र चारित्र कलाधर, पूजित यत्र-तत्र-सर्वत्र ।।

ज्ञान पुंज आचार्य ज्ञान मल, निर्मलता के धनी विशेष ।
मोक्षमार्ग का साधन वनता, ज्ञान-क्रिया का मेल हमेश ।।

पूनमचन्द्र समान पूज्य श्री, पूनमचन्द्र प्रसिद्ध महान ।
ज्ञान-ध्यान-आराधन द्वारा, जिनने पाया ऊँचा स्थान ।।

महाराज श्री जेठमल्लजी, कहलाये योगीश्वर संत ।
जिनकी दिव्य शक्ति का, कोई व्यक्ति नही पा सकता अंत ।।

महास्थविर श्री तारा गुरु की, त्याग-भावना मे था वल ।
प्रश्न भूलने का न उठाये, जिनकी स्मृति ताजा प्रतिपल ।।

पुष्कर उज्वल परम्परा का, श्रमण संघ मे स्थान विशेष ।
ज्ञान, कला, चारित्र, क्रिया का, रखते है जो ध्यान हमेश ।।

शिष्य प्रमुख देवेन्द्र ज्ञान के आराधन मे लगा हुआ ।
और प्रशिष्य समूह रात दिन, श्रुत-सेवा मे जगा हुआ ।।

अपनी बात :

दो हजार सेतीस साल का वर्षावास उदयपुर मे।
हर्ष व्याप्त है उर उर मे ज्यो झकृति रहती नूपुर में ॥

धर्म रग मे रगा हुआ है, सघ उदयपुर वाला जी।
बडे चाव से, बडे प्रेम से, पीता प्रवचन प्याला जी ॥

आस पास के गावो मे हम, विचरे जाग्रति लाने को।
संतों का कर्त्तव्य यही है, जगते जगत जगाने को ॥

माघ मास की शुक्ल पचमी सरस्वती पूजा का दिन।
कृति सपूर्ति देखकर विकसित पुष्कर मुनि का चित्त नलिन ॥

चुन महाभारत से मैंने, रुचिकर हितकर भव्य प्रसग।
रंगे हुए पर फबता फबता, चढ़ा दिया है इन पर रंग ॥

बय्यालीस कथाओ काही किया संकलन मुखकारी।
दो भागो मे बाट दिया जो हल्का नही, नही भारी ॥

कवि को प्रिय जन मन को प्रिय यह वाचक श्रोताओ को प्रिय।
इसीलिए इसकी रचना में पुष्कर बन पाया सक्रिय ॥

ऊँचा स्थान महाभारत का, भारतीय संस्कृति मे है।
ऊँचा स्थान भाव भापा का, पुष्कर मुनि की कृति मे है ॥

जीवन की शुभ शिक्षाओ का, काव्य करेगा नित विस्तार।
इसी भावना से पुष्कर ने, श्रम से किया इसे तैयार ॥

□ □